द्वितीय अध्याय

स्त्री मुक्ति के प्रश्नों का सामाजिक, राजनीतिक संदर्भ

2.1 स्त्री मुक्ति की अवधारणा

जब स्त्री को यह अहसास हो जाएगा कि वह गुलाम नहीं है, उसके भी पुरुषों की तरह घर में, समाज में समाज अधिकार हैं, उसकी भी अपनी सोच है, केवल स्त्री को अपनी अस्मिता का बोध होना ही स्त्री मुक्ति नहीं है बल्कि नारी को अहसास हो कि वह भी पुरुषों के ही समाज का एक हिस्सा है। उसकी तरह ही सब काम कर सकती है। स्त्री मुक्ति के बारे में अनामिका कहती हैं कि ‘‘स्त्री मुक्ति साझा चूल्हा है। मुझे हमेशा लगता है कि जैसे एक स्त्री को शिक्षित करना पूरे परिवार को शिक्षित करना है। स्त्री मुक्ति में ही सबकी मुक्ति है। तैयार करनी है ऐसी फिजां जहाँ सच कहते या सुनते किसी की आँख न झुके। कोई किसी का हक छीने नहीं सबकी दुनिया, सबकी धरती - हरी - भरी, उत्फुल्ल हो और झूठ किसी जीवन का चंद्र खिलौना न हो।’ ’ 1

स्त्री मुक्ति के संदर्भ मंे रमणिका गुप्ता लिखती हैं कि ‘‘स्त्री को जैसे ही अहसास हो जाएगा कि समाज, विशेषकर पुरुष, उसके प्रति विवेकमूलक दृष्टिकोण अपनाए, उस पर वर्चस्व नहीं जमाए, वह

प्रतिरोध करने का मन बनाने की दिशा में सोचने लगेगी। यह सोच ही मुक्ति का लक्षण है।’ ’ 2

स्त्री मुक्ति को परिभाषित करने के लिए रमणिका गुप्ता जी कुछ बिन्दु और बताती हैं जो निम्न हैं - “1. स्त्री का खुद का निर्णय करना। 2. स्त्री का स्वायत्तता हासिल करना, जिसमें उसे अपनी जिंदगी को खुद संयोजित करने की आजादी हो। 3. स्त्री और पुरुष की समानता यानी लिंग के आधार पर विभेद का न होना। 4. पुरुष वर्चस्व व उनकी हिंसा का प्रतिरोध और नकार।’ ’ 3

स्त्री मुक्ति के लिए सबसे बड़ी समस्या स्त्रियों में मुक्ति की इच्छा नहीं होना है। वह परिवार के बंधनों से बाहर निकलना ही नहीं चाहती है। आज के वर्तमान समय में नारीवाद, नारीमुक्ति, नारी सशक्तिकरण का शोर है। परंतु समाज में जब तक स्त्री स्वयं को मुक्त करने का बीड़ा नहीं उठाएगी तब तक वह मुक्त नहीं हो सकती। स्त्री स्वयं को दोयम दर्जे का मानती है और पुरुष का समर्थन करती है। स्त्री केवल अपने घर - परिवार को ही प्रेम करती है, वह स्वयं से प्रेम नहीं करती। स्त्री मुक्ति में शिक्षा और ज्ञान का अभाव भी बाधक है। अगर स्त्री आर्थिक रूप से समर्थ है तो उसमें आत्मसम्मान की भावना होगी।

‘मुक्ति आंदोलन’ पश्चिम का दिया हुआ है जिसके प्रति हर स्त्री आकर्षित हो जाती है। प्रगति और मुक्ति कौन नहीं चाहता है?

लेकिन प्रगति की दिशा क्या है ? मुक्ति किससे ? इन सब प्रश्नों के उत्तर अतिआवश्यक हैं। नारी मुक्ति चेतना अर्थात् नारी का अपने अस्तित्व व अपनी इच्छाओं के प्रति सचेत होना। यही सचेत होने की भावना नारी मुक्ति चेतना है। नारी मुक्ति चेतना वर्गीय मानसिकता नहीं बल्कि समाज द्वारा थोपे गए मूल्यों से निकलकर सोचना और अपने अस्तित्व की पहचान करनी है।

‘ ‘स्त्री मुक्ति का प्रश्न तमाम शोषितों पीड़ितों की मुक्ति की परियोजना का अविभाज्य अंग है और उसे इसके साथ जोड़कर इसके साथ चलना होगा। रास्ता अभी बहुत लम्बा है, चुनौतियाँ कठिन हैं और फिलहाल यह नई रणनीतियों के अन्वेषण और सत्यापन का शुरूआती दौर है। इस सच्चाई को स्वीकार कर ही नई शुरूआत की जा सकती है।’ ’ 4

2.2 स्त्री संघर्ष का इतिहास

भारतीय नारी के संघर्ष की समस्या पर विचार करने के लिए यह जरूरी है कि हम प्रागैतिहासिक भारतीय समाज से लेकर आदिकालीन, मध्यकालीन और आधुनिक समाज की विभिन्न परिस्थितियों और उनमें नारी की बदली हुई स्थिति का गहराई से अध्ययन करें। नारी स्वभाव से ही संघर्षशील है। अनेक शोषण, अत्याचारों के पश्चात् भी नारी चेतना जागृत नहीं हुई। आज भी स्त्री की स्थिति दयनीय है। भारतीय स्त्री का मुक्ति संघर्ष कहाँ से

प्रारंभ हुआ है। इसके लिए कुछ निश्चित प्रमाण नहीं मिलते हैं। प्राचीन समय में जब स्त्री समाज नियत नहीं रही तो उसने स्थिति को अपनी नियति मान, उसे लगभग स्वीकार ही कर लिया था। इस संदर्भ में हमारे यहाँ नारी मुक्ति का संघर्ष पश्चिम के अर्थ में पुरुषों की सत्ता से मुक्ति मात्र नहीं रहा। जब देश गुलाम था उस समय भी स्त्रियाँ पुरुषों की अनुपस्थिति में स्वयं अपने सिर पर यह जिम्मेदारी लेकर शत्रुओं को ललकारने से पीछे नहीं हटी।

"आदिकालीन नारी से लेकर वर्तमानकालीन नारी की सामाजिक यात्रा अत्यंत कठिन बंधनों के जकड़न से युक्त बर्बर मर्यादाओं, अत्याचारों और शोषण से युक्त रही है। विभिन्न पड़ाव से गुजरता, नारी मुक्ति आंदोलन 21वीं सदी तक आ पहुँचा है। व्यभिचार की विभिषिका को झेलती नारी संघर्ष का इतिहास, अपनी कथा स्वयं कह रहा है।' ' 5

स्त्रियों पर पुरुषों द्वारा होते आए शोषण, अत्याचार तथा दमन के विरूद्ध भी स्त्रियों को संघर्ष और विरोध करते रहना पड़ा है। स्त्रियों का संघर्ष और विरोध पुरुषों के लिए नहीं है बल्कि पितृसत्तात्मक, मानसिकता के विरूद्ध है। महिलाओं का संघर्ष केवल उनकी अपनी आजादी और अधिकारों तक सीमित नहीं है। महिला संघर्षों का मुख्य उद्देश्य महिलाओं की मुक्ति के साथ-साथ पूरे समाज में एक क्रांतिकारी बदलाव लाना है। महिलाओं ने वर्तमान

में ही अपने अधिकारों के लिए संघर्ष शुरू नहीं किया है बल्कि इतिहास में भी महिलाओं ने पितृसत्ता और लैंगिक असमानता के खिलाफ संघर्ष किया है।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि स्त्री संघर्ष के लम्बे इतिहास से गुजरी है। भारत पर मुस्लिम आक्रमण के समय में राज्य की बागडोर स्वयं संभाली, युद्ध लड़ने और वीरतापूर्वक शत्रु सेना के आने से पूर्व स्वयं की कटार से आत्मघात करने सामूहिक चिताएँ जलाकर जौहर करने तक, पीठ दिखाकर आने वाले पतियों का अपमान करने तक अनेक वीरगाथाओं से हमारा इतिहास भरा पड़ा है। रानी दुर्गावती, माता जीजाबाई, पन्नाधाय, देवल देवी, रानी पद्मिनी, रानी भवानी, ताराबाई आदि अनेक नाम ऐसे हैं जिन्होंने मातृभूमि और अस्मिता की रक्षा करने में अपनी जान की बाजी लगा दी।

भारत का स्वतंत्रता संग्राम स्त्रियों के योगदान के बिना कामयाब नहीं हो सकता था। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में और जलियांवाला बाग हत्याकांड के विरोध और खिलाफत आन्दोलन के समय नारियों की भारत की आजादी के संघर्ष की भूमिका को स्वीकार करते हुए महात्मा गाँधी ने लिखा है ‘‘पिछले बारह महिनों में हिन्दुस्तान की नारियों ने देश के लिए गजब का काम किया है। तुमने चुपचाप दया की देवियों का काम किया है। तुम में से कुछ ने धरना देने में मदद की है। यह सब तुमने हिन्दुस्तान की खातिर,

खिलाफत के खातिर और पंजाब जलियांवाला बाग की खातिर किया ’ ’ 6

गाँधी जी ने 1925 में कहा था कि “जब तक देश की नारियाँ घर आँगन की दहलीज को पार कर सार्वजनिक जीवन का मोर्चा नहीं सम्भालेंगी तब तक देश की मुक्ति संभव नहीं है।’ ’ 7

2.2.1 स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

स्त्रियों के प्रति भारतीय समाज का दृष्टिकोण शुरू से ही पितृसत्तात्मक एवं उत्पीड़नकारी रहा है। वैदिक युग में कुछ अधिकार व सम्मान प्राप्त थे परन्तु धीरे-धीरे वह पितृसत्तात्मक समाज के शोषण का शिकार होती चली गई। भारत में स्त्रीवादी आंदोलन की शुरूआत कब से हुई इसके बारे में निश्चित रूप से नहीं बताया जा सकता ?

1799 में चैसा के विद्रोह का नेतृत्व मिदनापुर की रानी ने किया। 1828 में अंग्रेजों के साथ युद्ध हुआ इसमें बहुत से अंग्रेज मारे गए। 1837 में अवध की बेगमों ने भी अंग्रेजों से युद्ध किया। सन् 1857 का स्वतंत्रता संग्राम प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था। देश में स्वतंत्रता के लिए संघर्ष हो या पुरुषों के साथ समानता का संघर्ष हो, महिलाओं ने हर क्षेत्र में बढ-चढ़कर भाग लिया है। पूँजीवादी पितृसत्ता ऊपर से सरल लगती है परन्तु अन्दर से जटिल है। आजादी के आन्दोलन से लेकर आज तक स्त्रियों ने अपनी भागीदारी

निभाई है। इतिहास के पन्नों में रानी लक्ष्मीबाई को छोड़कर अन्य वीरांगनाओं के नाम नहीं है। आजादी के इतिहास पर बहुत से गं्रथ लिखे गए हैं परन्तु कहीं भी महिलाओं के त्याग और बलिदान का जिक्र नहीं है। 19वीं सदी के अंत और 20वीं सदी के प्रारंभ में अनेक आन्दोलन हुए हैं जिनमें महिलाओं का कहीं नाम नहीं है। भारतीय स्त्री आन्दोलन को स्वतंत्रता आन्दोलन से जोड़ा जाता है इसकी शुरूआत संन्यासी विद्रोह से होती है।

इसकी सूत्रधार देवी चैधरानी थी। अंग्रेज इतिहासकारों ने इसकों 'दस्यु रानी' की संज्ञा दी थी। ''उस समय के लेफ्टिनेंट ब्रेनन की एक रिपोर्ट सें पता चलता है कि भवानी पाठक की विद्रोही गतिविधियों के पीछे देवी चैधरानी का प्रमुख हाथ था। भवानी पाठक के मारे जाने के बाद देवी चैधरानी ने हार नहीं मानी बराबर लड़ती रही, अंत तक अंग्रेजों के हाथ नहीं आई।' ' 8

देवी चैधरानी का नाम संन्यासी विद्रोह की एकमात्र सशक्त महिलाओं के रूप में अमर है। 1857 से 1942 तक आजादी के आन्दोलन में अनेक महिलाओं ने अपनी भागीदारी निभाई थी। इनमें से एक नाम दुर्गा भाभी का है। ये भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरू की भाभी थी। इन्होंने भी क्रांतिकारी आन्दोलन मंे भाग लिया था। परन्तु इनका नाम इतिहास के पन्नों में दबा हुआ है। इस संग्राम में

रामगढ़ की रानी बैजाबाई, रानी जिन्दल बाई आदि महिलाओं ने अपनी सशक्त पहचान बनाई है।

सन् 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। 1885-1905 में रवीन्द्रनाथ की बहन स्वर्ण कुमारी का नाम प्रसिद्ध है। 1900 में कलकता अधिवेशन में भाग लेने वाली प्रथम महिला थी।

''लार्ड कर्जन द्वारा किया गया बंगाल विभाजन का सारे बंगाल में व्यापक विरोध हुआ। 16 अक्टूबर 1905 को विभाजित बंगाल के स्थापना दिवस को राष्ट्रीय शोक दिवस के रूप में मनाया गया। इस समय पुरुषों के उत्साह को बढ़ाने के लिए नारियों ने उन्हें राखी बाँधी और सड़कों पर सरकारी निषेधाज्ञा के बावजूद वंदेमातरम् का उद्घोष किया।' ' 9

उस समय में स्त्रियों में शिक्षा के अभाव के कारण जागृति कम थी फिर भी स्वतंत्रता संग्राम में महिलाएँ किसी से पीछे नहीं रही। इनमें सरोजनी बोस, कुमारी कुमुदिनी मित्री, श्रीमती के.के गांगुली, सरला देवी चैधरी, ऐनी बेसेन्ट ने बढ-चढ़कर भाग लिया।

1910 में सरला देवी ने पंजाब में भारती स्त्री मंडल की स्थापना की। 1917 में सरोजनी नायडू के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मंडल स्त्रियों की रक्षा के लिए मांटेग्यू चेम्सफोर्ड से मिला। अप्रैल 1918 में पटना में हुए एक आयोजन में एनी बेसेंट ने कहा था जब तक औरतों को अधिकार नहीं मिलता तब तक मार्ले मिन्टों सुधार से कोई लाभ

नहीं होगा। 1921 के राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में बिहार की आठ महिलाओं ने भाग लिया। क्रांतिकारी गतिविधियों में सहयोग देने में मैडम भीकाजी कामा का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। इन्होंने कांग्रेस की स्थापना के बाद नारी और समाज कल्याण के कार्यो में सक्रिय भाग लेना शुरू कर दिया।

असहयोग आन्दोलन में स्त्रियाँ

गाँधी जी द्वारा चलाये गए असहयोग आन्दोलन में महिलाओं ने बढ़ - चढ़कर भाग लिया। रोलैट एक्ट जलियांवाला बाग हत्याकांड और तुर्की के खलीफा के विरूद्ध खिलाफत आन्दोलन शुरू हुआ इसमें महिलाओं ने राष्ट्रीय स्तर पर अपनी भागीदारी निभाई। ‘‘बंगाल में देशबंधु चितरंजनदास की पत्नी वासंती देवी और बहन उर्मिला देवी ने खद्दर बेचने और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का काम किया। गुजरात में कस्तूरबा गाँधी ने नमक कर बंदी सत्याग्रह में हिस्सा लिया। पंजाब में राधा देवी (लाला लाजपतराय की पत्नी), पार्वती देवी, बी. अमन (मोहम्मद अली शौकत की पत्नी), श्याम देवी आदि नारियों ने नारी जुलुसों, सभाओं और धरनों की धूम मचा दी। लाहौर में लाडो रानी जुत्शी, तारा देवी और झेलम में पुष्पा गुजराल सक्रिय रही। संयुक्त प्रांत (यू.पी) में कमला नेहरू और स्वरूपरानी नेहरू और अन्य नारियों ने बढ़ - चढ़कर हिस्सा लिया।’’10

दांडी यात्रा में महिलाओं की भूमिका

1928 में साइमन कमीशन के विरोध में होने वाले मोर्चों में भी महिलाओं ने बढ़ - चढ़कर भाग लिया। 12 मार्च 1930 को दांडी यात्रा में गांधी जी के साथ सरोजनी नायडू के अलावा अन्य नारियों ने भी बढ़-चढ़कर भाग लिया। इसमें स्वरूप रानी नेहरू, उर्मिला नेहरू, सरला भदौरिया, कमला नेहरू, विजयलक्ष्मी पंडित, शिवरानी देवी, लाला लाजपतराय की बेटी पार्वती देवी, दुर्गाबाई, लीलावती मुंशी, कपूरथला की राजकुमारी अमृतकौर, भगत सिंह की बहन अमरकौर आदि अनेक भारतीय नारियों ने इन आन्दोलनों में भाग लेकर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। ''वर्ष 1930-31 में आन्दोलन के समय लगभग 17000 नारियाँ जेल गई।'' 11

अन्य स्वतंत्रता आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी

सन् 1932 में सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भी महिलाओं ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस आन्दोलन में प्रभा दीक्षित, शांति आचार्य, श्रीदेवी मुसद्दी, डाॅ. थंगझा, राजकुमारी अमृतकौर आदि प्रमुख हैं। 8 अगस्त 1942 में नेहरू जी ने भारत छोड़ो प्रस्ताव रखा और 9 अगस्त को भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू हो गया। इस आन्दोलन में अरूणा आसफ अली ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अंग्रेज आन्दोलनकारियों को पकड़ भी नहीं पाई थी। अरूणा आसफ अली ने ध्वजारोहण समारोह में झण्डा फहराकर वहाँ से चली गई।

अंग्रेज अधिकारी उन्हें गिरफ्तार भी नहीं कर पाये थे। ‘‘उनके इसी योगदान के कारण अरूणा आसफ अली को 1942 की रानी झाँसी कहा जाने लगा।’ ’ 12

इस आन्दोलन में अरूणा आसफ अली, सुचेता कृपलानी, रामस्वरूप देवी, अमृतकौर, इंदिरागाँधी, पूर्णिमा बैनर्जी, उषा मेहता आदि महिलाओं ने इस आन्दोलन में बढ़-चढ़कर भाग लिया।

सन् 1943 में नेता जी सुभाष चन्द्र बोस ने आजाद हिन्द फौज की स्थापना की। इसमें स्त्रियों की भी अलग से सेना की टुकड़ी थी। इसे रानी रेजिमेंट नाम दिया गया था। इसकी कमांडर डाॅ. लक्ष्मी स्वामीनाथन थी। इसमें महिलाओं ने रणनीति बनाना, शस्त्र चलाना आदि अन्य सैनिक प्रशिक्षण लिये। महिलाएँ युद्ध में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए हमेशा तैयार रही हैं।

इन सब आन्दोलनों के चलते 15 अगस्त 1947 को भारत आजाद हो गया। इसमें जितने क्रांतिकारी पुरूषों ने भाग लिया है उतनी ही महिलाओं की भी भागीदारी है। परन्तु महिलाओं में कुछ ही महिलाओं के नाम स्मृति में रखे गए हैं। महिलाओं की भागीदारी नगण्य नहीं है। उन्होंने भी स्वतंत्रता के आन्दोलनों में सक्रिय भूमिका निभाई है।

2.2.2 भारत में नारी मुक्ति आन्दोलन

नारी मुक्ति आन्दोलन का आधार नारी मुक्ति चेतना ही है। भारत में सदियों से होते आ रहे नारी के प्रति शोषण, अत्याचारों से मुक्ति दिलाने के लिए जो चेतना की लहर चली उसे ही नारी मुक्ति आन्दोलन का नाम दिया गया। नारी मुक्ति आन्दोलन की डोर पुरुषों के हाथ में थी। फिर महिलाओं ने तय किया कि उन्हें अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना होगा। इसके लिए अनके संस्थाओं और संगठनों का जन्म हुआ। ''स्त्री आन्दोलन की समर्थक स्त्रियाँ पुरुष नहीं बनना चाहती। ब्रा-बर्निंग आदि एकाध आवेश मूलक घटनाओं के साक्ष्य से यह नहीं समझना चाहिए कि ये स्त्रियाँ अपनी विशिष्ट दैहिक, मानसिक और भाविक संरचना पर गर्व नहीं करती। जो प्राकृतिक विशिष्टताएँ है, शर्मनाक वे नहीं, शर्मनाक आरोपित सामाजिक मानदंड हैं जो दोहरे है और जिन पर पुनर्विचार होना ही चाहिए ताकि विकास के अवसर सब को समान मिल सकें।' ' 13

स्त्रियों के प्रति भारतीय समाज का दृष्टिकोण शुरू से ही पितृसत्तात्मक एवं उत्पीड़नकारी रहा है। वैदिक युग में कुछ अधिकार व सम्मान प्राप्त थे परन्तु धीरे - धीरे वह पितृसत्तात्मक समाज के शोषण का शिकार होती चली गई। भारत में स्त्रीवादी आन्दोलन की शुरूआत कब से हुई इसके बारे में प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है। सन् 1857 से 1885 तक का काल नवजागरण का काल माना

जाता है। भारत में युवा वर्ग को पाश्चात्य के संघर्षरत नारी आंदोलन से प्रेरणा मिली और समाज सुधारक राष्ट्रीय मंच पर उपस्थित हुए। स्त्री मुक्ति आन्दोलन भारतीय समाज सुधारक आन्दोलनों के साथ शुरू हुआ।

राजाराम मोहनराय ने 1815 ई. में 'आत्मीय सभा' की स्थापना की। इन्होंने स्त्री शिक्षा और सती प्रथा के विरोध में आन्दोलन छेड़ा। 1828 में बंगाल में ब्रह्म समाज, 1870 में बंबई में गोविंद रानाडे के नेतृत्व में प्रार्थना समाज तथा स्वामी दयानन्द सरस्वती के नेतृत्व में 1875 में आर्य समाज की स्थापना हुई। इन संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य था नारी उत्थान व नारी जागृति। इन्होंने समाज में प्रचलित कुरीतियों का विरोध किया। 4 दिसम्बर 1829 ई. में लार्ड विलियम बैंटिक द्वारा सती प्रथा का अंत हुआ। सन् 1856 में 'विधवा विवाह' को अनुमति मिली।

20वीं सदी का काल स्त्री जागरण का काल था। इस सदी के पहले दशक में स्त्री मुक्ति आंदोलन की दिशा में पहले नेहरू परिवार की चार महिलाओं - रामेश्वरी नेहरू, उमा नेहरू, कमला नेहरू और रूपकुमार नेहरू ने की। 1909 में रामेश्वरी ने 'प्रयाग महिला समिति ' का गठन किया। 1917 में ऐनी बेसेंट की अध्यक्षता में 'इंडियन वीमेंस एसोसिएशन' की स्थापना की। ''1921 के दशक में वेश्यावृति की मांग जोर पकडने लगी। इसके बाद सोवियत संघ में

महिलाओं की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए 1926 का फैमिली कोड लाना पड़ा।’ ’ 14

1925 में नेशनल काउंसिल आॅफ वूमैन इन इंडिया’ का गठन हुआ। 1927 में ‘अखिल भारतीय महिला परिषद्’ का गठन हुआ। इसमें मताधिकार, स्त्री शिक्षा, पर्दाप्रथा, व्यक्तिगत अधिकारों के मुद्दों को उठाया गया।

स्वतंत्रता के बाद नारी मुक्ति आंदोलन

‘‘आधुनिक परिदृश्य में नारी-मुक्ति का मुद्दा भारत में 1975 से शुरू हुआ माना जा सकता है, जब भारत से स्त्रियों का बहुत बड़ा जत्था बर्लिन में प्रथम विश्वस्तरीय महिला कांफ्रेंस में भाग लेने गया था। ‘ ‘15

आजादी के बाद से देश के भिन्न-भिन्न हिस्सों में नारी-आन्दोलन खड़े हो रहे थे। नारी मुक्ति आंदोलन उत्पीड़न और शोषण के खिलाफ उठने वाली आवाजों की सामूहिक अभिव्यक्ति है।

1948-50 तक आंदोलनकारियों में कम्युनिस्टों के नेतृत्व में तेलंगाना के ढाई हजार गाँवों को आजाद कराया। इस आंदोलन में घरेलू हिंसा के मुद्दे पर महिलाओं को जागरूक किया गया।

‘‘तेलंगाना आंदोलन में महिलाओं ने अगली कतार में डटे रहकर आंदोलन को तेज किया। केरल में महिला आंदोलनकारियों ने

'लाल सेन छावनी' बनाई। 1966-67 में भारतीय माओवादी आंदोलन में बड़ी संख्या में औरतों का समर्थन मिला। 1970 तक आते - आते संस्कृति, जाति, जेंडर जैसे मुद्दे जो उपेक्षित थे उन पर नजर गई। क्रांतिकारी वामपंथी आंदोलनों की देखा देखी समाजवादी आंदोलन की धारा फूटी जिसमें मध्यवर्ग की पढ़ी लिखी महिलाएँ शामिल हुई।' ' 16

70 के दशक में अनेक आंदोलन हुए। लैंगिक आधार पर औरतों का शोषण, श्रम का विभाजन, राजनीतिक - आर्थिक परिवर्तन, सामाजिक - व्यक्तिगत संबंध और लोकनीतियों के विरूद्ध आंदोलन चलें।

''1975 में नक्सलवादी आंदोलन से बनी 'लाल निशान पार्टी, श्रमिक संगठन और मागोवा जैसे कई संगठनों ने मिलकर 'संयुक्त महिला मुक्ति संघर्ष' सम्मेलन किया। इसके बाद 'महिला समता सैनिक दल' दलित महिलाओं का सगंठन तैयार हुआ।' ' 17

सन् 1971 में श्रीमती इंदिरा गाँधी के शासनकाल में पहली बार एक कमेटी का गठन किया गया था जिसे भारत की स्त्रियों के हालात का जायजा लेना था। इस कमेटी की रिर्पोट सन् 1975 में आई थी। ''इस रिपोर्ट में बताया गया था कि स्त्रियों के विकास में यदि कोई बात सबसे अधिक बाधक है तो वे हैं हमारी रूढ़िवादी परम्परा और रीति-रिवाज। एक आदर्श स्त्री के समाज में जो मानक हैं वे हैं

कि वह स्त्री कभी घर से बाहर नहीं निकलती, कभी अपने लिए कुछ नहीं मांगती। हमेशा त्याग और तपस्या में लगी रहती है। सन् 1975 में ही संयुक्त राष्ट्र ने 'अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष' या 'इंटर नेशनल वुमन ईयर' मनाया था। इस बात को भी पूरे 27 साल हो गए। यही वह निर्णायक बिन्दु था जहाँ से हमारे यहाँ स्त्रियों की भूमिका में बदलाव शुरू हुआ।' ' 18

70 - 80 के दशक में जहांँ महिलाएँ अदृश्य हैं वहीं 90 के दशक में महिलाएँ दिखी हैं। जया मेहता कहती हंै ''महिलाएँ समान वेतन के लिए लडंे, अच्छे काम के लिए लडें, अच्छी व्यवस्था के लिए लड़ें, अपने बच्चों की क्रेच व्यवस्था के लिए लड़ें पर कामगार वर्ग के आंदोलन की जो दिशा है, उसको बदलने, तय करने में भी हम एक हिस्सा हों।' ' 19 भारत में जहाँ-जहाँ नारियों ने पुरूषों के खिलाफ प्रदर्शन किये तथा बराबरी के नाम पर पुरुष को अपना दुश्मन बताया।

''नवम्बर 1983 के अंतिम सप्ताह में महाराष्ट्र के पवनार (वर्धा) स्थित ब्रहमा विद्या मंदिर के परिसर में द्वितीय विश्व महिला सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इसमें कुल बारह देशों की 650 महिला प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। इस सम्मेलन का अंत इस निष्कर्ष के साथ हुआ कि इन तीनों गुणों - निर्भयता, सामूहिकता और भावनात्मक एकता को बढ़ाने के लिए हमें द्विज बनना होगा।

जिन तीन शक्तियों का जिक्र किया है, उन लक्ष्मी, सरस्वती तथा शक्ति के गुणों की उपासना करनी होगी।’ ’ 20

महिलाओं के संघर्ष को सिर्फ उनकी अपनी आजादी और उनके अपने अधिकारों से जोड़कर देखा जाता है। परंतु ऐसा नहीं है। इन संघर्षों में महिलाओं के अधिकारों के साथ - साथ पूरे समाज का क्रांतिकारी बदलाव भी है। महिलाओं की मुक्ति के बिना क्रान्ति नहीं हो सकती और क्रान्ति के बिना महिलाओं की मुक्ति नहीं हो सकती।

क्रांतिकारी आन्दोलन में महिलाओं की संख्या में पहले से ज्यादा बढ़ोतरी हुई है। नारी मुक्ति के आन्दोलन में महिलाओं ने बढ़-चढ़कर भाग लिया है। पहले स्त्रियाँ रूढ़ियों और परम्पराओं के बोझ के नीचे दबी रहती थी। वर्तमान में स्त्रियों ने अपनी ताकत को पहचाना है। इन सबमें नारी मुक्ति आन्दोलन का बहुत बड़ा हाथ है। इन आंदोलनों के चलते ही महिलाओं ने अपने अधिकारों को पहचाना है। इन संगठनों और आंदोलनों के द्वारा महिलाओं को अपने अधिकारों के लिए जागरूक किया जाएगा। जिससे नारियों की स्थिति में सुधार होगा।

‘‘राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने वाली महिलाओं ने आधुनिकता को राष्ट्रीय जागृति के रूप में देखा उसी जागृति की ओर अग्रसर होने में अपने सारे प्रयत्न लगा दिये। उस उथल - पुथल के युग में स्त्री ने जो किया वह अभूतपूर्व होने के साथ-साथ उसकी प्राण

शक्ति का भी प्रमाण था। यदि उसके बलिदान, उसके त्याग भूले जा सकेंगे तो उस आंदोलन का इतिहास भी भूला जा सकेगा।’’21

2.3 स्त्री मुक्ति के प्रश्न और समाज

स्त्री का अकेला होना सामाजिक रूढ़ियों की क्षमता से संबंधित है। परिवार में स्त्री आज भी पुरुषों के अधीन है। समाज में स्त्रियों की स्थिति दयनीय है। उसे बलात्कार, मारपीट, दहेज प्रथा, वेश्यावृत्ति, दहेज न लाने के कारण बहू को मार डालना, आदि के कारण सब यातनाएँ झेलनी पड़ती हैं।

‘‘पुरुष और स्त्री दोनों इस समाज रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं। यदि एक पहिया बिल्कुल कमजोर हो गया है और दूसरा मजबूत है, तो वह गाड़ी

ठीक-ठीक चल ही नहीं सकती। हमारे यहाँ की समाज रूपी गाड़ी की यही दशा है। समय बड़ा ही नाजुक आ गया है। ऐसी अवस्था में यदि स्त्रियाँ स्वयं जागकर गाड़ी को चलाने में मद्द न देंगी, तो यह गाड़ी बहुत दिन तक नहीं चल सकेगी, क्योंकि गाड़ी बहुत दिनों से चलते-चलते उसकी धुरी ही घिस गई। उस धुरी को बदलने या उसकी मरम्मत कराने की जरूरत है। धुरी हमारा सामाजिक बंधन है। इसमें जब तक परिवर्तन न होगा और स्त्री जाति उठकर खड़ी न होगी, तब तक संभव है कि समाज की गाड़ी कहीं अर्रा कर बैठ न जाए। फिर लाख कोशिश करने पर भी वह न बनाई जा सकेगी।’’22

2.3.1 समाज और पुरुष वर्चस्व

आज हम जिस समाज में रहते हैं वहाँ केवल पूँजीवादी सोच ही नहीं पुरुष मानसिकता भी है। प्रभा खेतान ने लिखा है "पितृसत्ता एक सामाजिक घटना है। हजारों साल से चली आई ऐसी व्यवस्था जिसमें स्त्री की अधीनस्थता सर्वविदित है। पितृसत्ता ने स्त्री को अपने ज्ञान की वस्तु बनाया। उसे साधन के रूप में प्रयुक्त किया। उसके नाम, रूप, जाति, गोत्र सब अपने संदर्भ में परिभाषित किये। स्त्री का यह अमानवीकरण दलित के अमानवीकरण से कहीं ज्यादा सुक्ष्म है। क्योंकि दलित पुरुष भी तो पितृव्यवस्था सत्ता का सदस्य है और पुरुषोचित अहंकार के कारण स्त्री के शोषण और उत्पीड़न से वह भी बाज नहीं आता। दलित पुरुष अपने दमन से परिचित है मगर स्त्री चाहे वह किसी भी जाति या वर्ण की हो, अपने उत्पीड़न से परिचित ही नहीं है।' ' 23

स्त्री समाज में होने वाले अत्याचारों को मूक बनकर सहती जाती है, अपनी स्वतंत्रता के लिए आवाज नहीं उठाती है। पुरुष ने अपने फायदे के लिए स्त्री को सदैव हीन नजर से देखा है। कई तो स्त्रियों को केवल बच्चे पैदा करने का साधन मात्र समझते हैं। इससे अधिक कुछ नहीं है। स्त्री को हमेशा अबला, असहाय समझा जाता रहा है। यह सब देखकर वह अपने को इनसे अलग समझने लगी है। जब उसे अपने अस्तित्व का ध्यान आया तो उस समय पुरुष का

कब्जा बहुत सशक्त हो गया था। स्त्री और पुरुष दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं, एक के बिना दूसरे का अस्तित्व नहीं है।

''नारी यदि प्रकृति का वैभवपूर्ण अनुराग है तो पुरुष अनुरागी है। नारी यदि पथ है तो पुरुष उसका चिर पथिक है। वह यदि निर्मल धारा वाली सरिता है तो पुरुष आगाध सिंधु है। जिसमें दोनों का संगम होता है अर्थात् एक नौका है तो दूसरी उसकी पतवार है । नारी यदि देह है तो पुरुष उसका प्राण है। नारी कहीं भी एक-दूसरे के अभाव में किसी एक का अस्तित्व नहीं है।' ' 24

स्त्री को गृह लक्ष्मी, जननी, संध्यात्रिणी, सहधर्मिणी आदि सज्ञाएँ भी दी जाती हैं। आदिकाल से लेकर वर्तमान समाज तक स्त्रियों ने पुरुष का साथ देकर उनकी यात्रा को सरल बनाया है। कई विचारकों ने नारी के लिए अपने - अपने विचार प्रकट किये हैं।

''रविन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा 'तुम विश्व की पलनी, शक्ति की धारिका हो, शक्ति में माधुरी के रूप में।' नेपोलियन का विचार है 'सौन्दर्यवती नारी नयनाभिराम होती है, बुद्धिमति नारी को प्रसन्न करती है। एक अनमोल रत्न है और दूसरी रत्न राशि। शेक्सपियर की मान्यता है कि 'सौन्दर्य स्त्रियों को प्राय अभिमानी बनाता है, सद्गुण उनकों अति प्रसंशनीय बनाता है और विनय से वह देव तुल्य हो जाती हैं।' ' 25

समाज में नारी को बेटी की, पत्नी की, बहू की, ननद की, भाभी की, देवरानी की, जेठानी की, सास की आदि अलग-अलग भूमिकाएँ निभानी पड़ती हैं। प्राचीन काल से ही स्त्रियों को नगण्य समझा जाता है। स्त्री प्रतिदिन सुबह उठकर सफाई करती है, परिवार के सभी सदस्यों के लिए खाना बनाती है, प्यार से खाना खिलाती है, यदि स्त्री नौकरीपेशा है तो भी उसे जाने से पहले घर का सारा काम करके जाना होता है और जब वो वापस लौटती है तो भी सभी यही चाहते हैं कि वह उनकी इच्छाओं की पूर्ति करे। पुरुष काम से लौटता है तो चाहता है कि उसके जरूरत की सभी चीजंे उसे मिलें। देखा जाए तो पुरुष यदि काम करके थकावट महसूस करता है तो स्त्री को थकावट नहीं होती क्या ? अगर तुलना करके देखे तो स्त्री के कार्य पुरुष से अधिक हंै। पुरुष को तो आराम मिल जाता है परन्तु स्त्री को नहीं। यदि इतिहास देखा जाए तो पता चलता है कि स्त्रियों के ऊपर पुरुषों के अत्याचारपूर्ण व्यवहार होते ही आ रहे हैं।

हमारे समाज में लड़की का पैदा होना ही अपराधपूर्ण समझा जाता है। लड़का पैदा होता है तो घर में खुशियाँ मनाई जाती है। भोज का आयोजन और नृत्यगान का आयोजन किया जाता है। यदि लड़की पैदा हो जाती है तो ऐसा समझा जाता है जैसे घर में किसी की मृत्यु हो गई हो। पहले समाज में लड़कियों को गर्भ में ही मार दिया जाता था या पैदा होने के बाद मार दिया जाता था। यदि लड़कियाँ ही नही होंगी तो यह सृष्टि ही नहीं चलेगी।

स्त्रियों का समाज में क्या स्थान है? उनका क्या हक है? इन सब बातों पर केवल चर्चाएँ ही होती हैं, अमल नहीं होता है। अपनी प्राचीन परम्परा 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता' ' वाले आदर्श आज का पुरुष समाज भूल गया है और स्त्री को अपना गुलाम बना लिया है।

''पुरुष के अंधानुकरण ने स्त्री के व्यक्तित्व को अपना दर्पण बनाकर उसकी उपयोगिता तो सीमित कर ही दी साथ ही समाज को भी अपूर्ण बना दिया। पुरुष समाज का न्याय है, स्त्री दया ; पुरुष प्रतिशोधमय क्रोध है, स्त्री क्षमा। पुरुष शुष्क कत्र्तव्य है, स्त्री सरस सहानुभूति और पुरुष बल है, स्त्री हृदय की प्रेरणा।' ' 26

स्त्री समाज इतना भोला और सीधा होता है कि वह अपना सब कुछ भूलकर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देती है। अनामिका भी स्त्री समाज के बारे में कहती है कि ''स्त्री समाज एक ऐसा समाज है जो वर्ग, नस्ल, राष्ट्र आदि संकुचित सीमाओं के पार जाता है और जहाँ कहीं दमन है-चाहे जिस वर्ग, जिस नस्ल की स्त्री त्रस्त है-वह उसे अपने परचम के नीचे लेता है। तकलीफें मिल बाँटने का घरेलू तरीका अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर ऐसा सफल होगा, किसने सोचा था। एक दूसरे की जुएँ चुनती हुई, साथ कपड़े पछोटती हुई, धूप मंे झुंड बनाकर सिलाई बुनाई करती हुई औरतें एक-दूसरी को दुरूख-सुख सहज-अकुण्ठ भाव से सुना लेती थी वहीं औरतें अपनी तकलीफों का

एल.सी.एम निकालकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उनके निराकरण की मांग रख रही हैं-यह निश्चय ही एक बड़ी उपलब्धि है।'' 27

नारी ने भी स्वयं ही अपने आपको पुरुष के अधीन कर रखा है। स्त्री जाति-पुरुष जाति के आश्रय में रहने में ही अपना गौरव समझती है। एक आदर्श समाज में स्त्री स्वतंत्रता का चित्रण करते हुए वैज्ञानिक समाजवाद के प्रणेताओं में एक फ्रेडरिक एंजेल्स ने कहा था ''हम एक ऐसी दुनिया चाहते हैं जहाँ किसी स्त्री को उसकी इच्छा के विरूद्ध किसी पुरुष के सामने समर्पण न करना पड़े।'' 28 स्त्री को इस पुरुषवादी मानसिकता से लड़ने के लिए कोमलता और सहानुभूति के साथ-साथ विवेक और साहस को भी साथ लेकर चलना चाहिए।

कहा भी जाता है कि संसार में उनके पैदा होने के साथ ही उनके कार्यों का बंटवारा हो जाता है। पुरुष को घर के बाहर के कार्य करने होते हैं। स्त्रियों को घर के। घर के बाहर काम करना यदि कठिन है तो घर के कार्य भी कठिन हैं। घर के कार्यों को आसान समझा जाता है तो क्या पुरुष खाना नहीं बना सकता ? बच्चों का पालन-पोषण नहीं कर सकता ?

''पितृसत्तात्मकता से न तो स्वर्ण मुक्त हैं, न ही दलित। आश्चर्य तो तब होता है, जब हम दुनिया भर में स्त्री को पितृसत्ता के दृष्टिकोण के समर्थन में खड़ा पाते हैं। बहुत कम स्त्रियाँ हैं जो स्त्री

होने को हीनता का पर्याय नहीं मानती या अगले जन्म में पुरुष नहीं बनना चाहती। 'अगले जन्म मोहे बिटिया न कीजौ' जैसे लोकगीत घर-घर में आज भी गाए जाते हैं।' ' 29

2.3.2 धर्म के क्षेत्र में नारी शोषण

नारी के शोषण में धर्म का बहुत बड़ा हाथ है। धर्म के नाम पर समाज का जन साधारण विशेषकर स्त्रियाँ अंधविश्वासों और आडम्बरों में फँसी जा रही है। धार्मिक कर्मकाण्डों ने महिलाओं का धर्म के नाम पर शोषण किया है और महिलाएँ इस धर्म चक्र में फँसती ही जा रही हैं।

भारत में देवियों की पूजा की जाती है। उसी समाज में स्त्री को हीन दृष्टि से देखा जाता है। कोई भी धार्मिक कर्मकाण्ड हो कोई भी गीता, रामायण व अन्य पुराणों की कथाएँ हों, महिलाएँ ही सबसे आगे मिलती हैं। धर्म का आधार विश्वास है और स्त्रियों में श्रद्धा और विश्वास पुरुषों से अधिक पाया जाता है। धर्माचार पुरुष को भगवान की संज्ञा देता है और स्त्री को गुलाम बनाता है। स्त्री को विवाहोपरांत शिक्षा दी जाती है कि वह अपने पति को खुश रखे। स्त्री पति के लिए व्रत, उपवास करती है, भूखी-प्यासी रहती है परन्तु पति ऐसा नहीं करता, वह पत्नी के लिए भूखा, प्यासा नहीं रहता। धर्म में पुरुष के लिए कोई नियम कायदे नहीं हैं, सब स्त्रियों के लिए बनाए गए हैं।

पर्दा प्रथा, सती प्रथा, तलाक इत्यादि सब बातंे स्त्रियों के बंधन की कहानी बताते हैं।

जिस समाज में कहा जाता है कि स्त्रियों की पूजा जहाँ होती है वहाँ देवता निवास करते हैं। जब स्त्री का विवाह होता है तो उसे गृह लक्ष्मी, कुलवधु, घर संवारने वाली आदि अनेक नामों की संज्ञा दी जाती है। पति की मृत्यु के बाद स्त्री अभिशाप बन जाती है। धर्मकर्म में जहाँ विवाहिता स्त्री का पूजा में उपस्थित होना शुभ माना जाता है, वहीं विधवा को अमंगलकारी माना जाता है। विधवा को सिर के बाल तक बांधने की मनाही होती है और उसका मुंडन करा दिया जाता है। बौद्धिक काल में भी स्त्री को शापित जीवन जीने के लिए बाध्य किया जाता था। धर्म शास्त्र में विधवा स्त्री को धार्मिक कर्मकाण्ड, पूजा पाठ, या किसी भी शुभ कार्य में भाग लेने की अनुमति नहीं थी।

मनु ने विधवा के बारे में कहा है, ‘‘पति की मृत्यु के उपरांत स्त्री को केवल फलों-फूलों और मूलों को ही खाकर अपने जीवन को समाप्त कर लेना चाहिए। किन्तु उस स्त्री को किसी भी हालत में पर पुरुष का नाम भी नहीं लेना चाहिए।’ ’ 30

राजपूताना शासन में भी पति की मृत्यु के बाद स्त्री को पति की चिता के साथ सती हो जाना पड़ता था। देवदासी आदि प्रथा के नाम पर स्त्रियों का शोषण होता है। दक्षिण भारत के कर्नाटक राज्य के ग्रामीण इलाकों में आज भी देवदासी प्रथा प्रचलित है। ग्रामीण

क्षेत्रों के लोग रूढ़िवादी हैं। जिसका प्रमुख कारण लोगों का अशिक्षित होना है।

''आज भी इस प्रदेश के बेलगाँव जिला के सौदती तालुका की पहाड़ी पर 'एलामा देवालय' नाम का मंदिर है जहाँ देवदासी के रूप में चढ़ाई गयी लड़कियाँ रहती हैं। इस तालुका में कोई चार सौ के करीब गाँव हैं। गाँव को वहाँ खेड़े गांव कहा जाता है। इस क्षेत्र में हिन्दू बहुसंख्या में हैं और देवदासी पद्धति के अंतर्गत परिवार में जन्मी पहली कन्या को माँ - बाप इस देवालय के प्रमुख पुजारी के सुपुर्द कर देते हैं। इसे वे लोग कन्यादान कहते हैं।' ' 31

गाँव के रूढ़िवादी और अनपढ़ लोग ही इस पद्धति को मानते हैं। लोगों की मान्यता है कि 'कन्यादान' न करने के कारण भगवान नाराज हो जाते हैं और लोगों को प्राकृतिक प्रकोप का शिकार होना पड़ता है। यदि कोई परिवार वाले इस प्रथा को नहीं मानते उन्हें गाँव से निकाल दिया जाता है उसका बहिष्कार कर दिया जाता है। जितने भी संगठित धर्म हैं सभी स्त्री का तिरस्कार करते हैं। उन्हें पुरुष के समान अधिकार नहीं है। पंडितों का मानना है कि स्त्रियाँ ध्यान व उपासना को भंग करती हैं। वह ईश्वर से मिलन के रास्ते में बाधक हैं।

हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि धर्मो की पूजा की पद्धतियाँ अलग हैं। परन्तु सबका उद्देश्य एक ही ईश्वर की उपासना करना है।

परन्तु पितृसत्तात्मक समाज ने धर्म के नाम पर स्त्रियों का शोषण किया है। कोई भी धर्म स्त्रियों पर अत्याचार करने की अनुमति नहीं देता है। लोग धर्म की आड़ में स्त्रियों पर अत्याचार करते हैं।

''स्त्री असमानता का मूल स्त्रोत धर्म ही है। ईसाई, इस्लाम, यहूदी, हिन्दू, जैन, सिख या किसी भी धर्म में स्त्री को दोयम दर्जे का जीवन माना गया है। सभी धर्मों ने पुरुष को स्त्री से दूर रहने की सलाह हिदायत और शिक्षा दी है। सभी धर्मों ने प्रथम दृष्टया यह माना है कि सृष्टा या सर्वशक्तिमान पुरुष ही होता है।'' 32

ईसाई धर्म में स्त्री की उत्पत्ति के बारे में कुछ नहीं लिखा है। यहाँ स्त्री विस्तार पुरुष के वर्चस्व और स्त्री के शोषण पर निर्भर करता है। जैसे धरती से सीता का पैदा होना और पुरुष के अत्याचार के कारण पृथ्वी में समा जाना।

''बौद्ध धर्म को छोड़कर बाकी सभी धर्मों ने स्त्री को वर्जित क्षेत्र में रखा। इस्लाम में दो स्त्रियों की गवाही एक पुरुष के बराबर मानी जाती है। संभवतः विश्व के किसी भी धर्म की प्रवर्तक कोई स्त्री नहीं है, वह पुरुष ही है। सभी धर्मों में स्त्री को पुरुष के अधीन रहने का निर्देश दिया गया है। चंूकि अतीत में समाज धर्म से ही चलता रहा है और विकृत होता रहा है, इसलिए असली खुराफात धर्म ने ही की है।'' 33

हिन्दु धर्म में सौ स्त्रियों के उपवास का पुण्य एक पुरुष के बराबर भी नहीं माना जाता। इस्लाम धर्म में बहुपत्नी प्रथा है और 'तलाक' कहकर उसे छोड़ भी सकता है। पिता की संपत्ति पर स्त्री का अधिकार नहीं होता है।

आज के समय में स्त्रियाँ चार दीवारी से बाहर तो निकली है परंतु पूर्ण रूप से मुक्त नहीं हुई है। प्राचीन से लेकर वर्तमान तक नारी शोषण का शिकार होती आ रही हैं। आज के समाज में चाहे दो साल की बच्ची हो या अस्सी साल की बुढ़िया सभी शोषण का शिकार होती हैं। दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता आदि बड़े शहरों में महिलाएँ आत्मनिर्भर बनने के लिए संघर्षरत रहती हैं। उन्हें आए दिन यौन उत्पीड़न का शिकार होना पड़ रहा है।

''दिसम्बर 2012 में दिल्ली में चलती बस पर शराब के नशे में धुत्त वहशियों ने पैरामेडिकल की एक छात्रा को सामूहिक रूप से अपनी हवस का शिकार बनाने के साथ क्रूरता से उसकी पिटाई करके बस से फंेक कर दिल्ली समेत पूरे मुल्क को सकते में डाल दिया था। इस घटना को लेकर देश में तीव्र प्रतिक्रियाएँ भी हुई और कई दिनों तक दिल्ली में कोहराम मचा रहा।'' 34

इस घटना से भारतीय समाज में आक्रोश का माहोल था हजारों की संख्या में नारे लगाते हुए युवाओं के हुजूम सड़कों पर उतर आए थे। इस बलात्कार और हत्याकांड के सभी आरोपियों को पकड़ लिया

गया था। नारी का शोषण शारीरिक रूप से ही नहीं, मानसिक रूप भी हो रहा है। कानून और मानवाधिकारों के बावजूद भी स्त्री को आजाद नहीं होने दिया जाता।

समाज में स्त्री को केवल वस्तु समझा जाता है। लोग स्त्री की भावुकता का नाजायज फायदा उठाते हैं। परम्पराएँ स्त्री को जकड़न नहीं बल्कि सुरक्षा प्रदान करती हैं। स्त्री के साथ जो पग-पग पर शोषण और अत्याचार होता है क्या उससे हमारी परम्पराओं और संस्कृति को हानि नहीं होती ? प्रश्न यह उठता है कि कब तक स्त्रियों को इस अमानवीय अत्याचारों को सहन करना पडेगा?

2.3.3 परिवार में स्त्री की स्थिति

एक स्त्री के लिए उसका परिवार ही सब कुछ होता है। उसकी दुनिया परिवार से ही शुरू होती है और परिवार पर ही खत्म होती है। स्त्री को अपने परिवार में अनेक भूमिकाएँ निभाते हुए सहनशीलता का परिचय देना होता है।

‘‘घर जहाँ एक बुनियादी संरचना है, वहीं परिवार एक सामाजिक इकाई है पर व्यवहार रूप में अपने यहाँ घर और परिवार को एक दूसरे का पर्यायवाची ही समझा जाता है और दोनों इकाइयों के भीतर स्त्री और पुरुष के बीच जो आर्थिक और सामाजिक भेदभाव है, उसकी मात्रा लगभग बराबर ही दिखती है। चाहे घर या उसके भीतर के भौतिक उपादानों की मालिकी की बात हो अथवा समाज में

प्रतिष्ठा की हर जगह पारंपरिक तौर से पुरुष का नंबर काफी पहले आता है और स्त्री काफी बाद में।’ ’ 35

पूरे परिवार का भार संभालते हुए भी स्त्री को पुरुष से कमतर ही आंका जाता है। विवाह उपरान्त स्त्री को अपने परिवार में रहने वाले सभी सदस्यों का ध्यान रखना पड़ता है। स्त्री को अपने वैवाहिक जीवन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। स्त्री की मानसिकता पर परिवार का बहुत असर पड़ता है। स्त्री और पुरुष में आपसी सहयोग होना जरूरी है। स्त्री को प्रतिदिन 24 घंटे में से 18-19 घंटे काम करना पड़ता है। स्त्री के घर के कामों को गिना जाए तो वह पुरुष से अधिक काम करती है। वह क्या इस काम के बदले पगार लेती है ? वह निःस्वार्थ भाव से काम करती रहती है। प्रश्न यह उठता है कि स्त्री इस काम के बदले क्या चाहती है ? वह सिर्फ परिवार में सम्मान और प्रेम चाहती है। स्त्री में बस सेवा भावना और भक्ति भावना को ही प्राथमिकता दी जाती है। स्त्री को हमेशा अत्याचार, घरेलू हिंसा का शिकार होना पड़ता है। कवि रघुवीर सहाय ने भी स्त्रियों के बारे में अपनी कविता में लिखा है -

‘ ‘पढिए गीता, बनिए सीता, फिर उन सबमें लगा पलीता।

किसी मूर्ख की बन परिणीता, निज घर-बार बसाइए।’ ’ 36

प्रश्न यह उठता है कि विवाह नये संबंध बनाने के लिए होता है या पुराने संबंधों को तोड़ने के लिए ? क्या विवाह अपने अस्तित्व

और महत्त्वाकाक्षाओं को खत्म करने के लिए होता है? क्या विवाह एक समझौता है जो परिवार को परिवार के बंधन में बांध कर रखता है?

घरेलू हिंसा का शिकार

महिलाएँ घरेलू हिंसा का शिकार होती रहती हैं। कभी पति मारता पीटता है तो कभी सास मारती है। महिलाओं को भूखा रखा जाना, मारना पीटना, बच्चे के जन्म के समय अच्छी देखभाल न होने के कारण कितनी ही महिलाएँ मर जाती हंै। दहेज कम लाने के कारण स्त्रियों को मार दिया जाता है। एक वृद्ध आदमी की शादी उससे कई गुना कम उम्र की लड़की से कर दी जाती है।

‘‘लोग कहते हैं कि स्त्रियों के प्रति अत्याचार की बातों को बहुत बढ़ा चढ़ा कर लिखा जाता है। शायद हमारे न्यायकत्र्ताओं को भी यही सच लगता हो, तभी तो आज तक हर रोज दहेज के लिए औरतें मारी जाती हैं और अपराधियों को सजा नहीं मिलती। भँवरी बाई मैगसेसे पुरस्कार पाने वाली के बलात्कारी बाइज्जत रिहा कर दिए जाते हैं।’ ’ 37

समाज में स्त्री के लिए कोई हक नहीं है। जन्म होने पर पिता के युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पति के अभाव में पुत्र पिता या भाई के आश्रय में ही रहना पड़ता है। उसे घर की चार दीवारी में ही कैद रहना पड़ता है और वह हर वस्तु के लिए दूसरों पर आश्रित रहती

है और बोझ समझी जाती है। उसके घरेलू कामों की कहीं भी कोई गणना नहीं होती है।

यदि स्त्री का पति मर जाता है और वह विधवा हो जाती है तो उसकी स्थिति और भी भयावह हो जाती है। प्राचीन समय में स्त्री को अपने पति की चिता के साथ सती होना पड़ता था। स्त्री को एक अपशकुन की दृष्टि से देखा जाता था। हर शुभ कार्य में उसकी भागीदारी को वर्जित माना जाता था। विधवा को परिवार में सम्मान न देना भी घरेलू हिंसा ही है।

'आॅनर किलिंग' भी घरेलू हिंसा ही है। स्त्रियों को स्वतंत्रता नहीं है कि वह अपनी पसन्द से प्रेम विवाह कर ले। प्रेम विवाह को भी समाज बुरी नजर से देखता है अपनी पितृसत्ता के लिए खतरा मानता है। पितृसत्तात्मक समाज में धर्म के नाम पर स्त्रियों को दबाया जाता रहा है। जब तक स्त्री धर्म से मुक्त नहीं होगी, तब तक वह स्वतंत्र नहीं हो सकती।

पर्दाप्रथा

नारी समाज के लिए पर्दा प्रथा एक नासूर की तरह है। इसका प्रारंभ मुस्लिम संप्रदाय से शुरू हुआ। लड़की जब बड़ी हो जाती है तो उसका घर से निकलना बंद हो जाता था। ससुराल में भी स्त्री को अपने घर के लोगों से पर्दा करना पड़ता था। स्त्री का जीवन घर की चारदीवारी

तक ही सीमित हो गया। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी पर्दे में रहना उचित नहीं है।

''घूंघट में रहने वाली स्त्रियाँ क्षय की शिकार होती हैं। उंगली के पोर पर सलूका पहनने वाली या खूब मोटा घाघरा पहनने वाली स्त्रियों के शरीर में चर्म संबंधी अनेक बीमारियाँ हो जाती है।' ' 38

स्त्रियों को वस्त्र भी इस प्रकार के पहनने पड़ते थे जिससे शरीर का कोई भी अंग न दिखे तभी से बुर्के का प्रचलन बढ़ा। पुरुष समाज की वजह से आज भी मुस्लिम स्त्रियाँ बुर्के ओढ़ने को मजबूर हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी यह प्रथा प्रचलित है।

दहेज प्रथा

प्राचीन समय में कन्यादान के साथ कुछ दक्षिणा भी अपनी प्रसन्नता से दी जाती थी उसने आज भयावह रूप ले लिया है। मध्यकाल में एक ऐसी प्रथा ने जन्म लिया जिसने भयानक राक्षस की तरह परिवार में अशांति फैला रखी थी। माता-पिता अपनी बेटी को अपने सामथ्र्य के अनुसार धन देते थे। परंतु आज दहेज एक फैशन बन गया है। अमीर आदमी अपनी शान दिखाने के लिए दहेज देता है परंतु गरीब आदमी समाज में अपनी इज्जत बचाने के लिए दहेज देता हैं। दहेज एक ऐसा राक्षस बन गया है जिसमें स्त्रियों को मारने - मरने की नौबत आ जाती है। दहेज के लिए आज तक न जाने कितनी स्त्रियों ने अपनी जानें गँवाई हैं।

''आज दहेज हमारे समाज में एक असह्य बुराई बन गया है। पति को पत्नी के साथ-साथ सारे भोग विलास की वस्तुएँ चाहिए और पिता को सामाजिक प्रतिष्ठा, सामाजिक स्तर, अपनी जाति बिरादरी में सिर ऊँचा करने के लिए लड़के की शादी में लम्बे-चैड़े दहेज वाली बहू चाहिए।' ' 39

दहेज रूपी दानव ने मानवता को ही छीन लिया है। यदि लड़की दहेज नहीं लाती है तो उसे प्रताड़ित किया जाता है। मारा-पीटा जाता है। यहाँ तक की उसकी हत्या कर दी जाती है या लड़की इतनी परेशान हो जाती है कि वह आत्मदाह कर लेती है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि 'दहेज उत्पीड़न' होने पर स्त्री क्या करे ? वह क्या ऐसा करे जिससे वो बच जाए ?

''दहेज के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय विवाह के लिए 'दहेज की मांग' दहेज निषेध अधिनियम 1961 की धारा 4 को आकर्षित करती है। इस प्रकार वैधानिक स्थिति बिल्कुल स्पष्ट है कि यदि वर पक्ष विवाह की बातचीत के दौरान दहेज की मांग करता है तो दोषी व्यक्ति दहेज निषेध अधिनियम 1961 की धारा 4 के अंतर्गत 'अपराध' का दोषी होता है तथा जेल की सजा पा सकता है।' ' 40

समाज में लोग अपनी प्रतिष्ठा के लिए भी इसको बढ़ावा दे रहे हैं। हास्यास्पद स्थिति तो यह है कि ''दहेज का सबसे बड़ा सुपरिणाम

यह है कि हम अपने बेटों को डाॅक्टर, इंजीनियर, आई.ए.एस. आदि नहीं बनवा पाते, किंतु पैसों (दहेज) के बल पर बड़े से बड़े ओहदे वाला दामाद ही सहजता से खरीद लेते हैं।’’41

दहेज प्रथा ने ही कन्या भ्रूण हत्या जैसे अपराध को जन्म दिया है। कन्या के पैदा होते ही उसके विवाह के लिए दहेज की चिंता सताने लगती है। समाज में यदि दहेज प्रथा न हो तो समाज का मानचित्र अलग ही होता। कन्याओं की संख्या का अनुपात भी समान होता और निर्दोष और असहाय महिलाओं की मृत्यु नहीं होती।

कन्या भ्रूण हत्या

स्त्री समाज मंे कदम-कदम पर हिंसा का शिकार हो रही है। कन्या भ्रूण हत्या भी स्त्री के साथ हिंसा का ही एक रूप है। जब लड़की ससुराल जाती है तो उसे आशीर्वाद स्वरूप कहा जाता है ‘दूधो नहाओ, पूतो फलो’ कोई यह नहीं कहता कि पुत्री फलो। समाज में जिस स्त्री के लड़का पैदा होता है उसी को सम्मान मिलता है और जिसके लड़की पैदा होती है उसको घृणा की नजर से देखा जाता है। इस्लाम के भारत में आने के बाद सुरक्षा , विवाह , दहेज आदि प्रश्नों ने कन्या जन्म को सामाजिक अप्रतिष्ठा का विषय बना दिया तभी से ही कन्या हत्या जैसा जघन्य अपराध समाज में बहुत अधिक बढ गया है।

''स्त्री भ्रूण हत्या के समर्थन में तर्क यह दिया जाता है कि लड़कियों की सेना पालकर क्या होगा? उन्हें तो पराए घर जाना है। हमारे मयूरतख्त की और परलोक की रक्षा तो मर्द बच्चा करेगा।' ' 42

भ्रूण हत्या मनुष्य की विकृति और समाज की विकृति का द्योतक है। हमारे हिन्दू धर्म में बच्चों को मारना सबसे बड़ा पाप माना जाता हैं परन्तु कन्या भ्रूण की हत्या को पाप या अनैतिक नहीं माना जाता। हिन्दू धर्म में मान्यता है कि पुत्र ही माता-पिता की चिता को मुखाग्नि देगा और तर्पण भी पुत्र ही करता है तभी उनकी आत्मा को मुक्ति मिल सकती है।

हिन्दू , मुस्लिम, ईसाई या कोई भी धर्म हो सब पितृसत्ता के समर्थक हैं। वंश चलाने के लिए परिवार में पुत्र का होना आवश्यक है। पुत्र को कुल का दीपक कहा जाता है। लड़कियों को तो पराया धन माना जाता है। मायके वाले कहते हैं लड़की को ज्यादा पढ़ाना-लिखाना किस काम का है? इसके ऊपर ज्यादा खर्च क्यों करना यह तो विदा होकर अपने घर चली जाएगी। हमारे तो सिर्फ बेटा ही काम आएगा। ससुराल में लड़की को कहा जाता है कि तुम परिवार से कुछ नहीं लाई हो, सब हमें ही करना पडेगा।

आज ये सबसे बड़ी विडम्बना है कि स्त्री का घर कौन-सा है-मायका या ससुराल या दोनों या कोई नहीं ? यह कभी समझ न आने वाला

प्रश्न है कि लड़की किस घर को अपना घर कहे। आज वैज्ञानिक युग है तो अल्ट्रासाउण्ड से ही पता चल जाता है कि गर्भ में लड़का है या लड़की। यदि लड़की है तो उसे गर्भ में ही मार दिया जाता है।

लड़कियों को मारने का सबसे बड़ा कारण दहेज प्रथा भी है। घर में लड़की पैदा हुई नहीं कि उसके विवाह की चिंता सताने लगती है। लड़की का पिता सोचता है कि इसके विवाह पर कितना दहेज देना होगा और उसी दिन से ही उसके विवाह के लिए दहेज इकट्ठा करने का भूत सवार हो जाता है।

’ ’ स्त्री को दोयम दर्जे का ही नहीं, बल्कि महज एक वस्तु माना गया है, जिसका शादी के समय दान कर दिया जाता है। माँ यानी स्त्री भी, जिसकी संतान की हत्या होनी होती है। भ्रूण हत्या को निजात पाने के रूप में देखती है। जैसे कोई बोझ सिर से हट गया हो। ’ ’ 43

महिलाओं के खिलाफ होने वाली हिंसा के आँकडे दिन-रात बढ़ते ही जा रहे हैं। महिला हिंसा के कई रूप सामने आते हंै इनमें से कन्या भ्रूण हत्या भी एक भयावह रूप लेता जा रहा है। लड़कों की इच्छा में लडकियों को गर्भ में ही मारा जा रहा है। भारत में केरल राज्य को छोड़कर लगभग सभी राज्यों मंे लिंगानुपात कम ही है।

’ ’ 2011 की जनगणना के अनुसार देश में महिलाओं की संख्या 59 करोड़ है जबकि पुरुषों की संख्या 62 करोड़ से अधिक है। अगर

आँकड़ा निकाला जाए तो इस समय देश मंे 1000 पुरुषों मंे मात्र 940 महिलाएँ है। शिक्षित परिवारों में कन्या भ्रूण हत्या सबसे ज्यादा हो रही है। देश का केवल केरल ही एक ऐसा राज्य है जहाँ 1000 पुरुषों में 1084 महिलाएँ हैं।’’44

2.4 स्त्री और राजनीति

राजनीति के क्षेत्र में स्त्रियों की भूमिका नाममात्र है परंतु आजकल राजनीति के क्षेत्र में स्त्रियों का ध्यान बढ़ रहा है। पुरुष की सोच है कि जितना पुरुष राजनीति के क्षेत्र में बढ़-चढ़कर कुशलता से कार्य कर सकता है, स्त्री ऐसा नहीं कर सकती। स्त्री भी एक सामाजिक प्राणी है वह कब तक इन रूढ़ियों और परम्पराओं के बंधन में जकड़ी रहे। गुलामी की जंजीरों को तोड़कर स्त्री भी प्रगति के पथ पर बढ़ना चाहती है। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में भी स्त्रियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया था परंतु कुछ गिने-चुने नाम ही लोगों को याद हैं। आजादी और लोकतंत्र की लड़ाई में अनेक महिलाएँ आगे आई थीं।

भारतीय महिलाएँ धीरे-धीरे राजनीति में भी अग्रसर होने लगी हैं। गाँधी जी के आह्वान पर 1920-21 में असहयोग आंदोलन में महिलाओं ने भाग लिया, भारतीय स्त्री के राजनैतिक जीवन का आरंभ इसी आंदोलन से माना जाता है। इससे पहले भी सरोजनी नायडू, ऐनी बेसेंट जैसी महिलाएँ राजनीतिक क्षेत्र में कार्य कर रही

थी। असहयोग आन्दोलन के बाद संपूर्ण नारी समाज में चेतना की लहर जाग उठी। बम्बई और मद्रास के उपरान्त बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और पंजाब में भी नारी को मत देने का अधिकार प्राप्त हुआ। गाँधी जी का विश्वास था कि स्त्री जब किसी कार्य को पूरी निष्ठा के साथ करती है तो उसमें पर्वतों को हिला देने की शक्ति का संचार होता है। राजनीति में सक्रिय भागीदारी के कारण उसे समाज में महत्व मिलने लगा तथा पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर उसने यह प्रमाणित कर दिया कि वह केवल भोग्या या गुलाम नहीं है बल्कि समाज के विकास में योगदान देने वाली अस्मिता बोध से युक्त समर्थ शक्ति है।

भारतीय संविधान में पुरुषों और महिलाओं को समानता का स्थान प्रदान किया है। लेकिन उनकी स्थिति हमेशा से ही सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक दृष्टि से पुरुषों से कमतर मानी जाती रही है। समाज में स्त्री को केवल नगण्य स्थान ही प्राप्त था। परन्तु 20वीं शताब्दी में महिलाओं ने घर से बाहर कदम रखा और प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज की है। आजादी के बाद महिलाओं में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया। स्त्री आज सिर्फ घर की चारदीवारी तक सीमित नहीं है बल्कि पुरानी रूढ़िवादी परम्पराओं को तोड़कार वह मुक्त हो रही है। 8 मार्च को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है। क्या केवल एक ही दिन

महिला दिवस मनाना चाहिए ? क्या एक दिन महिला दिवस मनाने से परिस्थितियाँ बदल जायेंगी ?

गाँधी जी ने स्त्रियों की सहनशील और महत्वाकांक्षी प्रवृत्ति के बारे में लिखा है। ''अगर अहिंसा हमारे जीवन का प्रधान मंत्र है तो कहना होगा कि देश का भविष्य स्त्रियों के हाथ में है। ''45

भारतीय समाज में सबसे सकारात्मक प्रभाव मध्य वर्ग की महिलाओं पर पडा़ है। मध्य वर्ग की महिलाएँ आज सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सभी क्षेत्रों में बढ-चढ़कर भाग ले रही हंै।

''राजनीति के क्षेत्र में भारत में इंदिरा गाँधी प्रधानमंत्री के पद पर लोकप्रिय और सुदृढ़ नेता रही हैं। अब महिला विधायकों, सांसदों और मंत्रियों की संख्या भी पर्याप्त है। अनेक नाम महिलाओं के बढ़ते कदमों के प्रमाण हैं। विजय लक्ष्मी पंडित ने सन् 1953 में संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा की अध्यक्षता कर भारत को विश्व में विशिष्ट स्थान दिलवाया। महिला सरपंच और अर्थव्यवस्था में भी गांव में रामरती जैसी महिलाएँ महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।'' 46

पहले महिलाओं को वोट देने का अधिकार भी नहीं था। उन्हे सिर्फ घर तक ही सीमित रखा जाता था। महिलाएँ अपने वोट के अधिकार के बारे में सजग नहीं थी। सन् 1998 में 2 करोड़ महिलाओं के नाम सूची में नहीं थे लोक सभा या विधान सभा सभी चुनावों में आज भी महिलाओं की संख्या 40 प्रतिशत या 50 प्रतिशत ही रहती

है। पुरुषों की संकीर्ण सोच इस ग्राफ को बढ़ने नहीं देती है। वे सोचते हैं कि महिला राजनीति में आ गई तो वह घर परिवार से दूर चली जायंेगी। वह प्राथमिकता घर को नहीं बल्कि अपने राजनीतिक क्षेत्र को देंगी।

महिला आरक्षण की राजनीति

महिलाओं के आरक्षण में अनेक प्रकार की परेशानियाँ आई। पितृसत्तात्मक समाज ने कहा कि लैंगिक आधार पर कोटा निधारित करने से व्यक्तिगत अधिकारों की हानि होगी। ‘‘विधायकों में महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित करने के मसले पर संविधान सभा में विस्तार से चर्चा हुई थी। देश में महिलाओं की स्थिति पर गौर करने के लिए बनाई गई शिक्षा व समाज कल्याण मंत्रालय की एक समिति ने संसद में महिला आरक्षण का मसला उठाया था। इस समिति ने 1974 में मंत्रालय को सौंपी अपनी रिपोर्ट में राजनीतिक संस्थाओं में महिलाओं की कम भागीदारी पर चिंता जाहिर करते हुए पंचायतों और शहरी निकायों में उनके लिए सीटों के आरक्षण की सिफारिश की थी।’ ’ 47

21वीं सदी को ‘महिलाओं की सदी’ के रूप में भी जाना जाता है। 1993 में 73वां 74वां संशोधन मंे महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिया गया। परन्तु केवल 10 प्रतिशत तक ही महिलाओं की भागीदारी दिखती है। कई पुरुषवादी सोच रखने वालों को यह डर है

कि यदि संसद में महिलाएँ अधिक आ गई तो यह आरक्षण 33 प्रतिशत से बढ़कर 50 प्रतिशत् न हो जाये। राजनीति में आरक्षण मिलने से महिलाएँ न केवल सार्वजनिक रूप से उभर कर आई हैं बल्कि पुरुषों के बढ़ते वर्चस्व को भी कम किया है। पहले की अपेक्षा अब राजनीति में स्त्रियों की भागीदारी बढ़ी है।

''वर्ष 1991 में भारत की संसद में कुल 499 सीटों में से 22 (4.5 प्रतिशत) सीटों पर महिलाएँ चुनी गई। 1957 - 62 में 500 सीटों में से 27 (5.4 प्रतिशत) पर महिलाएँ चुनी गई। फिर 1962-67 में 31 (6.28प्रतिशत) पर तथा 1967-71 में 29 (5.58 प्रतिशत), 1971-76 में 28 (5.42 प्रतिशत) सीटों पर महिलाएँ निर्वाचित हुई। इसके बाद 1977-80 में 19 (3.51 प्रतिशत) तथा 1989-91 में 29 (5 .48 प्रतिशत) सीटें महिलाओं को मिली। इसके उपरान्त 1999 में 49 (9.2 प्रतिशत) हुई यानी पन्द्रहवीं लोकसभा में 59 महिलाओं की मौजूदगी के साथ यह अनुपात बढ़कर 10.31 फीसदी हुआ। 16वीं लोकसभा में 61 महिला उम्मीदवार पहुँची हैं।'' 48

देखा जाए तो यह आंकड़ा सर्वाधिक है केवल 11 फीसदी ही महिलाओं की हिस्सेदारी है। 33 प्रतिशत आरक्षण की बात होती है क्या 33 प्रतिशत महिलाएँ संसद में हैं ? केवल महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण से महिलाओं का संपूर्ण सशक्तिकरण नहीं होगा।

यह वही देश है जहाँ प्रथम व्यक्ति भी महिला बन चुकी है। श्रीमती प्रतिभा देवी सिंह पाटिल की भागीदारी बहुत ही अहम है। सुचेता कृपलानी, सरोजनी नायडू, विजय लक्ष्मी पंड़ित, इंदिरा गाँधी, किरण बेदी, सोनिया गाँधी आदि सशक्त महिलाएँ राजनीति में है। पहले महिलाओं को वोट भी अपने पति से पूछकर देना होता था। वोट देने में भी स्वतंत्रता नहीं थी। हाल ही में हरियाणा में महिला सरपंचों की संख्या में बढ़ोतरी हुई। जहाँ बहुएँ पर्दा निकालकर चलती थी वहीं महिलाएँ बैठकर न्याय कर रही हैं। यह महिला जागृति की तरफ बढ़ता हुआ कदम है।

अनामिका भी वोट की राजनीति को देखते हुए कहती हैं ‘‘कम से कम तीसरी दुनिया के देशों में मुख्य टारगेट-ग्रुप में निम्नवर्गीय, निम्न मध्यवर्गीय स्त्रियाँ है जिनकी वोट आदि के संदर्भ में भी अपनी निजी राय नहीं होती और जिनकी पतिव्रत्य की हजार मिसालों में एक मिसाल है कि वोट तक वे पति के निर्देशों के अनुसार ही डालती हैं और आरक्षण आदि के प्रताप से यदि कहीं की मुखिया या सरपंच भी चुनी गई तो उनके सारे निर्णय उनके पति परमेश्वर ही लेते हैं।’ ’ 49

महिला सशक्तिकरण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए महिलाओं का शिक्षित करना आवश्यक है। महिला शिक्षित है तो पूरा परिवार शिक्षित है। शिक्षित महिला ही सामाजिक, आर्थिक,

राजनीतिक क्षेत्रों में आगे बढ़ सकती हैं। पहले पंच अनपढ़ भी बन जाते थे परन्तु वर्तमान में उसके लिए भी शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है। वर्तमान में राजनीति में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है परन्तु यह संतोषजनक नहीं है। स्वतंत्रता के 60 साल बाद भी महिलाओं की भागीदारी 10 प्रतिशत ही है। भारत में 29 राज्य हैं परन्तु केवल 5 राज्यों में ही महिला मुख्यमंत्री है। ''महिलाओं की राजनीति में भागीदारी बढ़ने से उसकी अन्य क्षेत्रों में भी भागीदारी स्वतः ही बढ़ने लगेंगी। अतः त्रिस्तरीय पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी निर्धारित हो जाने के बाद अब अतिशीघ्र महिला आरक्षण संबंधी संविधान संशोधन पास करके संसद और राज्य विधान मंडलों में महिलाओं की 30 प्रतिशत भागीदारी निर्धारित करना ही समय का तकाजा नहीं है बल्कि राजनीति के सभी स्तरों पर 50 प्रतिशत उत्तरदायित्व उन्हें सौंपना होगा साथ ही आर्थिक, प्रशासनिक, न्यायिक तथा विकास क्षेत्रों में उनकी 50 प्रतिशत भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु सभी स्तरों पर व्यापक प्रयास करने होंगे। ' ' 50

2.5 आज का समाज और स्त्री मुक्ति के प्रश्न

नारी मध्ययुग से आधुनिक युग तक अपनी स्थिति में सुधार लाने की कोशिश करती रही है। आधुनिक समाज में प्रगति तक पहंॅुचने के लिए नारी को अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए निरन्तर संघर्ष करना पड़ा है। सदियों से चली आ रही अज्ञानता की

खाई को मिटाना आसान नहीं था। यह प्रगति की रफ्तार कम थी। 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ मे स्वयं महिलाओं ने इस ओर रूचि दिखाई और अपने सम्मान और अस्तित्व को बचाने के लिए महिला संगठनों ने स्वयं इस कार्य की बागड़ोर अपने हाथ में ली। समाज में पुरुष सत्ता ही कायम है। स्त्रियाँ इस सत्ता को बदलना चाहती हंै हड़पना नहीं चाहती। पुरुष को इस बात का भय है कि स्त्री को आजादी मिल गई तो वह उसके इस पितृसत्तात्मक समाज को मातृसत्तात्मक न बना दे। जो निर्णय पुरुष लेते हंै उनसे उनका अधिकार न छिन जाये।

आधुनिक समाज में पश्चिमी सभ्यता के आगमन और नवजागरण आन्दोलन के कारण स्त्रियांे की स्थिति में परिवर्तन आरम्भ हो गया था। ज्यों-ज्यों समाज का विकास होता गया स्त्रियों की स्थिति मंे सुधार होता गया। राजाराम मोहनराय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर आदि ने स्त्री शिक्षा, सती प्रथा पर रोक तथा विधवा विवाह करवाकर समाज मंे नारी की स्थिति में सुधार किया। नारी की स्थिति मंे सुधार करने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका के रूप में शिक्षा का स्थान है। वर्तमान समाज में जो कुरीतियाँ सदियों से चली आ रही थी उनका निदान होने लगा और नारी की शिक्षा प्राप्ति के मार्ग खुलने लगे। आज के समय में पुरुषों ने यह अनुभव कर लिया है कि यदि स्त्री के विकास के मार्ग में आने वाली रूकावटों को दूर नहीं किया गया तो विकास करना असम्भव है। क्योंकि स्त्री और पुरुष

इस जीवन रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं। एक पहिए के सहारे गाड़ी नहीं चलती है, दूसरा हम किसी भी प्राणी को अधिक दिनों तक बंधन में नहीं रख सकते हैं लेकिन कुछ लोग अभी भी यह समझते हैं कि स्त्री को स्वतंत्रता दी गई तो वह पुरुष वर्चस्व को चोट पहुँचा सकती है। कुछ लोग स्त्री की स्थिति में सुधार को समाज के विकास में सहायक समझते हैं। समाज में नारी की स्थिति को सुधारने के लिए कानून बनाए गए हैं, जो स्त्री के सामाजिक, शारीरिक व मानसिक विकास के लिए लगातार प्रयासरत हैं।

स्त्री अपने काम के साथ-साथ घर को भी सम्भालती है। स्त्री, पुरुष, परिवार और समाज को संभालती है। प्रेमचन्द अपनी पत्नी शिवरानी के समक्ष कहते हैं -"जब स्त्रियाँ अपने को पुरुषों से अलग समझने लगंेगी तो याद रखों संसार भयंकर हो जायेगा।' ' 51

वर्तमान में इस संघर्ष भरे दौर में स्त्री सुरक्षित नहीं है। यदि वह पुरुष की सम्पत्ति बनकर रहती है- तो वह सुरक्षित है, उसको सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। आज के इस आधुनिककाल में भी परुष उसे भोग की ही वस्तु समझता है। रमणिका गुप्ता कहती हैं कि, "यदि पुरुष आज भी अहम पालता है और स्त्री पर वर्चस्व जमाना चाहता है, तो ये सामंती गुण हैं। जानवरों का गुण है। पुरुषों ने आज तक इस पशुवत प्रवृत्ति को बचाए रखा है, जबकि सभ्यता इससे उभरने का निर्देश देती है।' ' 53

आज के युग में स्त्री दो राहों पर खड़ी है जहाँ एक ओर तो चारदीवारी है और दूसरी ओर प्रगति की वह राह है जहाँ स्त्री को इस चारदीवारी के बाहर जाना पड़ता है। इस राह में कई कठिनाइयाँ भी आती हैं। आधुनिक समय में स्त्री के लिए सुधार के कई उपाय किये जा रहे हैं और नारी का शोषण भी हो रहा है। स्त्री अपने जीवन में आने वाली समस्याओं को पार करके अपने मुक्ति के मार्ग पर अग्रसर है।

स्त्री शिक्षा अनिवार्य

मध्ययुगीन समाज में स्त्री की शिक्षा नगण्य थी। उस समय में समाज में व्याप्त कुरीतियों जैसे पर्दा प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा आदि के कारण घर के बाहर जाकर शिक्षा प्राप्त करना कठिन था। लोग समझते थे कि स्त्री को अगर शिक्षित कर दिया गया तो वह आर्थिक रूप से स्वावलम्बी हो जायेगी और दूसरे समाज की मान मर्यादा पर आँच आयेगी।

19वीं सदी के उतरार्द्ध में स्त्री शिक्षा की ओर ध्यान जाने लगा। समाज सुधारकों ने स्त्री शिक्षा का बीड़ा उठाया और इसके पश्चात् धीरे-धीरे लोगों में जागृति आने लगी। उन्होंने लोगों को समझाने का प्रयत्न किया कि यदि स्त्री अशिक्षित रहेगी तो समाज का विकास नहीं हो सकेगा। यदि स्त्री को शिक्षित किया गया तो समझो की पूरे परिवार को शिक्षित कर दिया। पंडिता रमाबाई, आनन्दीबाई जैसी

नारियों ने समाज के सामने उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने स्त्री शिक्षा पर बल दिया जिससे वह समाज का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन सके। एनी बेसंेट ने महिलाओं को धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा देने का प्रबल समर्थन किया। इसके साथ-साथ साहित्यिक, वैज्ञानिक, शारीरिक और कलात्मक शिक्षा भी स्त्री के लिए उपयोगी है। समाज सुधारकों द्वारा स्त्री शिक्षा के प्रयास किये जाने के कारण स्त्रियों की स्थिति में सुधार हुआ है। शिक्षा के कारण ही स्त्रियाँ समाज द्वारा बनाई गई रूढ़ियों से बाहर निकली तथा समाज में उसे अपनी स्थिति का अहसास हुआ कि उसका क्या अस्तित्व है? जो स्त्री शिक्षा को अनिवार्य तो मानती हैं परन्तु एक सीमा तक। स्वामी दयानन्द सरस्वती की टिप्पणी-''लड़कियों की शिक्षा का चरित्र लड़कों की शिक्षा से भिन्न होना चाहिए। हिन्दू लड़की को हिन्दू लड़कों से भिन्न प्रकृति के कार्य करने होते हैं। अतः मैं उस अवस्था को प्रोत्साहित नहीं करूँगा जो उन्हें उनके राष्ट्रीय चारित्रिक गुणों से वंचित कर दे। हम अपनी लड़कियों को ऐसी शिक्षा नहीं दंेगे जो उनकी सोच को बदल दे। दूसरी टिप्पणी लाल लाजपतराय की है-अतीत से लेकर वर्तमान तक मेरी यह दृढ़ मान्यता रही है कि पुरुषों में शिक्षा प्रसार की सख्त तथा महत्त्वपूर्ण जरूरत है परन्तु स्त्रियों की शिक्षा उन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कोई सहयोग दे, यह आवश्यक नहीं।'' 53

प्रारम्भ में केवल कन्या पाठशालाओं का निर्माण हुआ, इसके पश्चात् महिला महाविद्यालयों का ही निर्माण हुआ। जहाँ स्त्रियाँ स्वतंत्र रूप से शिक्षा प्राप्त करती थी। शिक्षा के प्रसार से स्त्रियों में आत्मविश्वास जगा है और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आज आधुनिक नारी प्रवेश कर रही है। आज शिक्षा के प्रभाव से ही स्त्री हर स्थान पर अपनी उपस्थिति दर्ज कर रही है। आज स्त्री शिक्षिका, डाॅक्टर, इंजीनियर, पायलेट यहाँ तक की सीमा सुरक्षा बल में भी महिलाओं की भर्ती होने लगी है। आज के दिन एक भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहाँ स्त्री न हो। लड़कियों की शिक्षा में बढ़ोतरी के लिए भी सरकार ने अनेक कार्यक्रमों, नीतियों, उपायों योजनाओं का सहारा लिया है।

लड़कियों की शिक्षा के लिए 'सर्वशिक्षा अभियान' सबसे महत्त्वपूर्ण माना जाता है। यह एक राष्ट्रीय कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम में लड़कियों के विद्यालय में दाखिले से लेकर, शिक्षा को जारी रखने तक सभी कार्य इसके अन्तर्गत आते हैं।

प्राथमिक शिक्षा के आयोजन और व्यवस्था करने में बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता है जिसमें लड़कियों को निःशुल्क शिक्षा, आठवीं कक्षा तक सभी लड़कियों को शुल्क रहित पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराना, लड़कियों के लिए अलग शौचालयों का निर्माण, शिक्षा को हर तरह से उनके अनुकूल बनाना, शिक्षा के लिए लड़की के परिजनों को प्रेरित करना आदि सभी कार्य

लड़कियों की शिक्षा के लिए शुरू किए गए हैं। सर्वशिक्षा अभियान से अभिभावकों में जागृति उत्पन्न हुई है। वे अब इस बात को समझने लगे हैं कि लड़कियों को शिक्षित करके ही हम अपने परिवार और समाज का विकास कर सकेंगे। कई माता-पिता तो यह सोचकर नहीं पढ़ाते कि पढ़ाने से क्या होगा लड़की को तो केवल चूल्हा-चैका ही करना है ? वर्तमान में काफी हद तक सरकार लड़कियों को शिक्षित करने में कामयाब हुई है। पढ़ाई बीच में ही छोड़ने वाली लड़कियों की संख्या में गिरावट आई है।

'कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना' इस योजना के प्रारंभ 2004 से हुआ। इस योजना के तहत उच्च प्राथमिक स्तर पर लड़कियों को शिक्षित करना है। साक्षर और चेतनाशील, जागरूक समाज लोकतंत्र का आधार होता है।

कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय कार्यक्रम के लक्ष्य निम्न हैं -

' '1. उन किशोरियों को शिक्षा सुविधा उपलब्ध कराना जो नियमित रूप से स्कूल जाने में असमर्थ हैं।

2. स्कूल से बाहर रहने वाली दस वर्ष से अधिक की उन लड़कियों को सहायता पहुँचाना जो प्राथमिक स्कूल की शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाई।

3. विभिन्न स्थानों पर बसी यायावर आबादी की उन बालिकाओं को स्कूल उपलब्ध कराना जो प्राथमिक स्कूली शिक्षा पूरी नहीं कर पाई।’ ’ 54

आज के समाज में स्त्री शिक्षा का स्तर बढ़ा है और अधिकतर महिलाएँ शिक्षित हंै जो अपनी सारी जिम्मेदारियों को निभाने की क्षमता रखती हैं। आज की नारी पुरुष के समान अपना स्थान प्राप्त करने के प्रयास कर रही है। लोगों के मन में शिक्षा के प्रति उपेक्षा का भाव रहता था वे उसे विदेशी सभ्यता की देन समझते थे। किन्तु समाज सुधारकों ने नारी शिक्षा के प्रति लोगों को जागरूक किया और भारतीय संस्कृति के अनुरूप नारी को शिक्षित बनाने का प्रयत्न किया गया। आज स्त्रियाँ शिक्षा के क्षेत्र में पुरुषों से कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ रही हैं।

2.5.1 समकालीन घरेलू स्त्री

प्राचीन काल से ही स्त्री को केवल घरेलू स्त्री की भूमिका में ही रखा है। इसमें उन स्त्रियों की संख्या आती है जो पति को परमेश्वर मानती हैं और उसके हाथों शोषण का शिकार होती हैं। ये स्त्रियाँ भारत की शान समझी जाती हैं। पुरुष घर की सारी जिम्मेदारियाँ इन्हंे सौंप कर स्वयं बाहर की जिम्मेदारियाँ सम्भालता है। घरेलू स्त्री इन्हें ही अपना दायित्व मानकर घर में पिसती रहती है, वह खुद भूखी-प्यासी रहकर घर के सदस्यों का पेट भरती है। त्याग, वीरता,

सहनशीलता, ओजस्विता, धैर्य, क्षमा, क्रोध, दया, ममता आदि सब गुण इन स्त्रियों में मिल जाते हैं। वह अपने अधिकारों के प्रति उदासीन है। नारी घरेलू हिंसा का शिकार होती आ रही है। आज वर्तमान में घरेलू हिंसा कम हुई है परंतु समूल नष्ट नहीं हुई है। सरकार ने घरेलू हिंसा से निपटने के लिए कानून भी बनाए हैं।

''महिलाओं के साथ घर की चार दीवारी के भीतर होने वाली हिंसा रोकने के लिए लक्षित महत्त्वपूर्ण विधेयक की विशेषताएँ निम्नलिखित हंै - विधेयक के कानून बन जाने पर घर के भीतर महिलाओं के साथ मारपीट करने वाले को एक साल तक सजा भुगतनी पड़ती है। 'महिलाओं की रक्षा विधेयक 2005 में वर्णित 'घरेलू हिंसा' शारीरिक, यौन, मौखिक, भावनात्मक और आर्थिक क्षति पहुँचाना या पहुँचाने की धमकी देना शामिल है। महिला या उसके रिश्तेदारों से दहेज मांग कर उन्हें उत्पीड़ित करने को भी बिल में शामिल किया गया है। इसके अंतर्गत दी गई शक्तियों में मैजिस्ट्रेट पीड़ित स्त्री के पक्ष में सुरक्षा आदेश जारी कर सकता है। आदेश की अवहेलना को अपराध माना जाएगा और दोषी को एक साल के कारावास और 20,000 रूपये जक जुर्माने की सजा दी जा सकती है।' ' 55

मृणाल पाण्डे भँवरी देवी का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहती हैं ''भारत के दूरदराज के गाँवों में मोटे तौर से आज भी हालात

ऐसे हैं कि यदि एक दलित है, उस पर भी औरतजात तो प्रताड़ना और उत्पीड़न आपके जीवन का अनिवार्य हिस्सा बनते चले जाते हैं। अधिकतर औरतें इसे अपनी नियति मानकर हर तरह के अत्याचार और अन्यायों को मूक होकर झेलती आई हैं। लेकिन भँवरी का मामला उदाहरण है कि अब धीमे-धीमे ही सही, एक नई लोकतांत्रिक चेतना-अब वहाँ भी भँवरी जैसी औरतों की मार्फत प्रवेश करने लगी है। अन्याय के आगे टूटना नहीं, झुकना नहीं और अपनी सच्चाई पर अड़े रहना है, इसकी एक मिशाल बनकर उभरी है भँवरीबाई।' ' 56

29 अगस्त 2015 को हरियाणा के प्रत्येक जिले में महिला पुलिस थाने बनाए गए हैं। अगर किसी महिला के साथ घरेलू हिंसा होती है तो उन पर तुरन्त कार्यवाही की जाती है। परन्तु क्या इन कानूनों, योजनाओं से हम घरेलू हिंसा को कम कर सकते हैं ? घरेलू हिंसा को कम करने के लिए सर्वप्रथम महिलाओं को स्वयं ही आगे आना होगा। अपने आपको इस काबिल बनाना होगा कि कोई भी उस पर हिंसा न कर सके। ये सब आर्थिक, मानसिक और शारीरिक रूप से सदृढ़ होने से होगा। वर्तमान समाज में काफी हद तक इस हिंसा का प्रकोप कम हुआ है और घरेलू महिला भी राहत की सांस लेने लगी है।

मृणाल पाण्डे कहती हैं, ''दरअसल हमारे आज के उपभोक्तावादी समाज की लालचभरी नैतिकता हमारे पुराने समाजी की उस सामंती

हेकड़ी से जुड़ गई है, जिसके तहत ब्याह के बाद एक को बिना चूँ-चपड़ किये ससुराल में हर किस्म की अमानवीय परिस्थिति से तालमेल बिठाने को तैयार रहना चाहिए और यथा संभव दहेज तो साथ लाना चाहिए ही। दहेज निरोधक दंड कानून की धारा 498ए, जो एक स्त्री को अपने उत्पीड़न के खिलाफ सुनवाई का लाकतांत्रिक हक देती है तथा धारा 406, जो स्त्री को विवाह-विच्छेद मनुष्योचित गरिमा और क्षमता देती है, जो सीधे इस समाज की स्त्री विरोधी धारणाओं से टकराते हैं।' ' 57

'कन्या भ्रूण हत्या' जैसे जघन्य अपराध पर रोक लगाने के लिए सरकार ने भी कड़े कदम उठाए हैं। सरकार ने कन्याओं की गर्भ में हत्या करने वाले माता-पिता को जुर्माना व जेल की हवा खानी पड़ सकती है। जो भी डाॅ. लिंग परीक्षण करता पकड़ा जायेगा उसका लाइसेंस रद्द कर दिया जाएगा। जो गरीब लोग ये सोचकर कन्याओं को मारते थे कि इनका खर्चा कैसे उठाएंगे, पढ़ाई के लिए खर्च क्यों करें, यह तो पराया धन है ? इसके लिए भी सरकार ने अनेक योजनाओं को चलाया है। लाडली योजना, सुकन्या समृद्धि योजना, इंदिरा गाँधी प्रियदर्शनी विवाह शगुन योजना, आदि अनेक योजनाएँ चलाई गई हैं। 24 जनवरी 2015 को 'बेटी बचाओ- बेटी पढ़ाओ' योजना का शुभारंभ हरियाणा के पानीपत जिले से हुआ। इस योजना नेे पूरे भारत में एक आन्दोलन के रूप में कार्य किया और लोगों को जागरूक करने के लिए 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' के नारे लगाए।

बेटी पढ़े तो तब गी, जब वो बचेगी पहल तो बेटी बचाने की करनी होगी। किसी भी कार्य को करने के लिए पहले एक व्यक्ति को ही आगे आना पड़ता है, लड़की को बचाने के लिए हमें अपने से ही शुरूआत करनी होगी और हम अपने लक्ष्य तक पहुँच पाएँगे। लड़कियोेंं को पढ़ाने के लिए सरकार ने निःशुल्क शिक्षा, निःशुल्क पाठ्य सामग्री, सम्मान व उपहारों का प्रावधान किया है।

बेटियों के बिना हम सभ्य और सशक्त समाज की कल्पना भी नहीं कर सकते। हमें अपने समाज देश को विकसित करने के लिए महिलाओं की स्थिति सुधारनी होगी। समाज में महिला कहीं न कहीं अपने शोषण की जिम्मेदार स्वयं है। इन्हें स्वयं इस शोषण से बचने के लिए संघर्ष करना होगा।

भारत में नारी उत्थान के नियम एवं कानून

‘‘नारियों की उन्नति में सहायता के लिए अनेक अधिनियम बनाए गए हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं: सती प्रथा निरोधक अधिनियम 1829, हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1872, विवाहित नारी सम्पत्ति अधिनियम 1874, भारतीय उत्तराधिकारी अधिनियम 1925, बाल विवाह निरोधक अधिनियम 1929, हिन्दू नारियों का सम्पत्ति अधिकार 1937, मुस्लिम स्वीय विधि अधिनियम 1937, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1940, कारखाना अधिनियम 1940, विशेष विवाह अधिनियम 1954, हिन्दू

विवाह अधिनियम 1961, दहेज निषेध अधिनियम 1961, 1984, 1986, विदेशी विवाह अधिनियम 1996, गर्भाधान का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971, प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम (दुरूपयोग निवारण अधिनियम) 1972, बालविवाह अधिनियम 1976, समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम 1984, अनैतिक वर्णन अधिनियम 1986, स्त्री अविष्ट तकनीक अधिनियम 1994, नारियों के लिए पंचायतों तथा नगर पालिकाओं में सीटों का आरक्षण 1994, नारियों के लिए पंचायतों तथा नगरपालिकाओं में सीटों का आरक्षण उपलब्ध कराने के लिए संविधान में 73वां तथा 74वां संशोधन आदि।’’58

कामकाजी महिलाएँ

स्त्री के प्रति शोषण का मुख्य कारण अशिक्षा और आर्थिक कमजोरी रही है। उसे हर काम के लिए पुरुष पर निर्भर रहना पड़ता है। इन्हीं सब यातनाओं और तिरस्कार को झेलकर स्त्री ने इससे बाहर आने का निर्णय किया है। इसलिए कामकाजी महिलाओं का एक वर्ग उभरकर सामने आया हैं। इसमें अधिकतर उच्च मध्यम वर्ग और निचले स्तर से आई औरतें हैं। ये घर की चारदीवारी से निकलकर बाहर की दुनिया से अपने संबंध बना रही हैं।

कामकाजी महिलाओं का शोषण दोहरा-तिहरा है। सामन्तवादी उत्पीड़न की सीमाएँ स्पष्ट हैं। गैर सरकारी या

असंगठित क्षेत्र की कामकाजी स्त्रियों की समस्याएँ भीष्ण हो गई हैं। इन क्षेत्रों में समान काम, समान वेतन का नियम लागू नहीं है। कम वेतन और पूरे काम के लालच में पैट्रोल पम्प से लेकर दुकानों, माॅल तक के काम आजकल स्त्रियों से कराए जाते हैं पर इसमें कार्यरत स्त्रियों की पीड़ाएँ अधिक गंभीर और असंख्य हैं।

वर्तमान में स्त्रियाँ हर क्षेत्र में कार्यरत हंै। स्त्री जो भी कार्य करती हैं उसे पूरी निष्ठा और समर्पण के साथ निभाती है। कामकाजी स्त्रियों को दोहरी भूमिका निभानी पड़ती है। वह अपने घर और बाहर के कामों में संतुलन बनाकर चलती है। तसलीमा नसरीन कहती हैं, ''जिस दिन समाज स्त्री शरीर का नहीं उसकी मेधा और श्रम का मूल्य देना सीख जायेगा, सिर्फ उस दिन 'स्त्री' मनुष्य के रूप में स्वीकृत होगी।' ' 59

आज समाज में लड़कियाँ बंधनों को तोड़कर पढ़ने, लिखने और नौकरी करने लग गई हैं। आज महिला प्रत्येक क्षेत्र में अपनी भागीदारी निभा रही है। घर में स्त्री को अपने श्रम का महत्त्व मिलने लगा है। महिलाएँ अपनी मेहनत और लगन के बल पर अपनी मंजिल को जरूर पा लेंगी। पहले महिलाओं को सेना में भर्ती नहीं किया जाता था परन्तु आज सेना व पुलिस में भी स्त्रियाँ हैं। ''अब इक्कीसवीं सदी की शुरूआत में स्त्री का प्रवेश सेना में भी हो गया है। पतियों का अधिनायकवाद भी समाप्ति की ओर है। आज कामकाजी

स्त्री का पति काफी संवेदनशील है। आज पति-पत्नी सभी प्रकार की समस्याएँ (घर, परिवार, दफ्तर) आपस में मिलकर सुलझाते हैं। पत्नियों को आगे बढ़ने के लिए निरन्तर प्रोत्साहित करते रहते हैं। ' ' 60

2.5.2 आधुनिक भारतीय समाज में स्त्री का योगदान

आज प्रत्येक क्षेत्र में स्त्री अपनी भागीदारी निभा रही है। समाज में स्त्री का स्तर पहले से काफी बढ़ा है। भारत एक ऐसा देश है जहाँ विरंागनाओं की कमी नहीं है। यह वह देश है जहाँ कल्पना चावला, सुनीता विलियम्स, प्रथम महिला वायु सुरक्षा अधिकारी प्रेम माथुर, प्रथम ट्रेन ड्राइवर सुरेखा यादव, किरण बेदी, प्रथम महिला प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी, प्रथम महिला राष्ट्रपति प्रतिभा देवी सिंह पाटिल जैसी अनेक महिलाएँ हमारे भारत देश में हुई हैं। भारत की प्रथम नागरिक महिला बन चुकी है। यहाँ तक कि मिसाइल परीक्षण में भी महिलाओं की भागीदारी है।

''देश की सुरक्षा की मजबूत दावेदारी में देश की मिसाइल सुरक्षा की कड़ी में 5000 किलोमीटर के मारक क्षमता वाली 'अग्नि-5' मिसाइल का सफल परीक्षण टेसी थाॅमस ने किया। इसलिए इन्हें 'मिसाइल वूमेन' एवं 'अग्निपुत्री' से सम्बोधित करते हैं। 20 सालों से ये देश की मिसाइल प्रोजेक्ट को सम्भाल रही हैं।

भारतीय 'टै[a] क एंड फिल्ड की रानी' पीटी ऊषा को भूला नहीं जा सकता।' ' 61

समाज में स्त्रियाँ शोषण का शिकार होकर आत्महत्या कर लेती हैं जब तक देश में कन्या भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा, आत्महत्या, बलात्कार, तलाक जैसी हिंसक घटनाएँ होती रहेंगी तब तक हमारे समाज और देश की प्रगति नहीं होगी।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि वर्तमान समाज में स्त्रियों की स्थिति में सुधार हुआ है। वह प्राचीन काल से चली आ रही रूढ़ियों से कुछ हद तक मुक्त हुई है। स्वतंत्र व्यक्तित्व के साथ - साथ वह समाज के विकास में भी योगदान दे रही हंै। जिन प्राचीन संस्कारों ने स्त्री को पक्षाघात के रोगी के समान जकड़ लिया था, स्त्री ने यह जान लिया था कि उसने यदि अपनी स्थिति से उभरने का प्रयास नहीं किया तो उसकी दासता का अंत कभी नहीं हो सकता। जब से नारी को आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई है उसकी एक अलग ही छवि उभरकर सामने आई है। आज समाज में स्त्री की ऐसी छवि है जो पुरुष से कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है। वर्तमान समाज में स्त्री घर तक ही सीमित नहीं होना चाहती वह सामाजिक क्षेत्र में भी अपने अमूल्य योगदान की कल्पना करती है। शिक्षा, स्वास्थ्य, कानून और साहित्य के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी उसके सहयोग से

समाज का विकास हो सकेगा। स्त्री चाहती है कि उसकी एक स्वतंत्र नागरिक की छवि बने। पुरुष नाम से उसकी पहचान ना हो बल्कि स्वयं के गुणों, अवगुणों से उसका अस्तित्व बने तथा समाज के विभिन्न कार्य क्षेत्रों में निर्णय लेने की स्वतंत्रता मिले, इससे समाज और तरक्की करेगा।

संदर्भ

द्वितीय अध्याय

1. अनामिका, स्त्री विमर्श का लोकपक्ष, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2012, पृ. सं. 77
2. रमणिका गुप्ता, स्त्री मुक्ति: संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2014, पृ. सं. 61
3. वही, पृ. सं. 24
4. कात्यायनी, लेख: 'उत्तर' समय में स्त्री: प्रतिरोध और संघर्ष की चेतना, समयांतर, सितंबर-2015, सं-पंकज बिष्ट, अंक - 12, पृ. सं. 38
5. लेख: स्त्री अस्मिता का संघर्ष: नये प्रश्न और नई चुनौतियाँ, बीींजजपेहंती अपअमाण् इसवहेचवजण्बवउण्
6. डाॅ. जैनेन्द्र यादव, नारी सशक्तिकरण: दशा एवं दिशा, ट्राइडैन्ट पब्लिशर्स, दिल्ली, प्र. सं. 2013, पृ. सं. 20
7. वही पृ.सं. 20
8. जनसत्ता, लेख: मुक्ति आंदोलन और महिलाओं की हिस्सेदारी, ूूूण्दंेजजंण्बवउ

9. डाॅ. जैनेन्द्र यादव, नारी सशक्तिकरण: दशा एवं दिशा, ट्राइडैन्ट पब्लिशर्स, दिल्ली, प्र. सं. 2013, पृ. सं. 21

10. वही, पृ. सं. 23

11. वही, पृ. सं. 24

12. वही, पृ. सं. 25

13. अनामिका, स्त्रीत्व का मानचित्र, सारांश प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं.1999, पृ. सं. 10

14. सुष्मिता, लेख: जेंडर पितृसत्ता और महिला मुक्ति का सवाल, समयांतर, मार्च 2016, सं पंकज बिष्ट, अंक - 16, पृ. सं. 39

15. रमणिका गुप्ता, स्त्री मुक्ति: संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं.2014, पृ. सं. 24

16. अनिल पुष्कर, लेख: सामाजिक यथार्थ से कटा स्त्री-विमर्श, समयांतर, जनवरी, 2016, सं पंकज बिष्ट, अंक-4, पृ. सं. 48

17. वही, पृ. सं. 49

18. क्षमा शर्मा, स्त्रीत्ववादी विमर्श ; समाज और साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2002, पृ. सं. 20

19. अवंतिका शुक्ला, लेख: महिला आंदोलन 1990 के बाद, समयांतर, जनवरी 2016, सं पंकज बिष्ट, अंक-4, पृ. सं. 71

20. डाॅ. अमरनाथ, नारी का मुक्ति संघर्ष, रेमाधव पब्लिकेशन प्रा. लि., गाजियाबाद, सं. 2007, पृ. सं. 190

21. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र. सं. 2008, पृ. सं. 44

22. डाॅ. संजय गर्ग, स्त्री विमर्श का कालजयी इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. 2012, पृ. सं. 65

23. प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्री-मुक्ति कामना की दस वार्ताएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. 2003, तृ.आ. 2010, पृ. सं. 39

24. सीमा दीक्षित, स्त्री अस्मिता: शय्या से सर्वोच्य अदालत तक, सामयिक बुक्स, प्र. सं. 2011 , पृ. सं. 16

25. उषा अरोड़ा, लेख: महिला अस्तित्व की पहचान, आजकल, मार्च - 2015, सं फरहत परवीन, अंक-11, पृ. सं. 6

26. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र. सं. 2008, पृ. सं. 14

27. अनामिका, स्त्रीत्व का मानचित्र, सारांश प्रकाशन, नई दिल्ली प्र. सं. 1999, पृ. सं. 15

28. आलोक नंदन, लेख: स्त्री भक्षण का भयावह दौर, लहक, अक्टूबर 2013, सं. निर्भय देवयांश, अंक-2, पृ. सं. 50

29. रमणिका गुप्ता, स्त्री मुक्ति: संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2014, पृ. सं. 52

30. ज्ञानेन्द्र रावत, औरत: अस्मिता और यथार्थ, कान्ती बुक सेंटर, दिल्ली, प्र. सं. 2006, पृ. सं. 236

31. वही, पृ. सं. 270

32. रमणिका गुप्ता, स्त्री मुक्ति: संघर्ष और इतिहास, सामयिक बुक्स, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2014, पृ. सं. 47

33. वही, पृ. सं. 48

34. आलोक नंदन, लेख: स्त्री भक्षण का भयावह दौर, लहक, अक्टूबर 2013, सं. निर्भय देवयांश, अंक-2 , पृ. सं. 50

35. मृणाल पाण्डे, स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्र. सं. 1987, पृ. सं. 86

36. क्षमा शर्मा, स्त्रीत्ववादी विमर्श: समाज और साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2002, पृ. सं. 18

37. वही, पृ. सं. 19

38. डाॅ. संजय गर्ग, स्त्री विमर्श का कालजयी इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. 2012, पृ. सं. 226

39. सीमा दीक्षित, स्त्री अस्मिता: शय्या से सर्वोच्चय अदालत तक, सामयिक बुक्स, प्र. सं. 2011, पृ. सं. 50-51

40. वही, पृ.सं. 52

41. वही, पृ.सं. 55

42. अनामिका, स्त्री विमर्श का लोकपक्ष, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, प्र. सं. 2012, पृ.सं. 80

43. रमणिका गुप्ता, स्त्री मुक्ति: संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं. 2014, पृ.सं. 197

44. बबीता उप्रेती, लेख: महिला सशक्तिकरण: नारे और यथार्थ, समयांतर, मार्च 2015, सं-पंकज बिष्ट, अंक-6, पृ.सं. 29

45. डाॅ. संजय गर्ग, स्त्री विमर्श का कालजयी इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 2012, पृ.सं. 11

46. उषा अरोड़ा, लेख: महिला अस्तित्व की पहचान, आजकल, मार्च 2015, सं. फरहत परवीन, अंक-11, पृ.सं. 7

47. पार्थिव कुमार, लेख: महिला आरक्षण की राजनीति, समयांतर, जनवरी 2016, सं. पंकज बिष्ट, अंक-4, पृ.सं. 54

48. आतिफ रब्बानी, लेख: राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में लैंगिक असमानता, समयांतर, जनवरी 2016, सं पंकज बिष्ट, अंक - 4 पृ. 58

49. अनामिका, स्त्रीत्व का मानचित्र, सारांश प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 1999, पृ.सं. 15-16

50. डाॅ. जैनेन्द्र यादव, नारी सशक्तिकरण: दशा एवं दिशा, ट्राइडैन्ट पब्लिशर्स, दिल्ली, प्र.सं. 2013, पृ.सं. 158

51. रोहिणी अग्रवाल, स्त्री लेखन: स्वप्न और संकल्प, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. 2011, पृ.सं. 88

52. रमणिका गुप्ता, स्त्री मुक्ति: संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. 2014, पृ.सं. 127

53. रोहिणी अग्रवाल, स्त्री लेखन: स्वप्न और संकल्प, राजकल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र. सं. 2011, पृ.सं. 49-50

54. डाॅ. जैनेन्द्र यादव, नारी सशक्तिकरण: दशा एवं दिशा, ट्राइडैन्ट पब्लिशर्स, दिल्ली, प्र. सं. 2013, पृ.सं. 67

55. ज्ञानेन्द्र रावत, औरत: अस्मिता और यथार्थ, कांती बुक सेन्टर, दिल्ली, प्र. सं. 2006, पृ.सं. 56

56. मृणाल पाण्डे, परिधि पर स्त्री, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., दरियागंज, नई दिल्ली, प्र.सं. 1996, तीसरी आवृत्ति-2011, पृ.सं. 40

57. वही, पृ.सं. 37

58. डाॅ. जैनेन्द्र यादव, नारी सशक्तिकरण: दशा एवं दिशा, ट्राइडैन्ट पब्लिशर्स, दिल्ली, प्र.सं. 2013, पृ.सं. 116-117

59. सीमा दीक्षित, स्त्री अस्मिता: शय्या से सर्वोच्च अदालत तक, सामयिक बुक्स, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2011, पृ.सं. 126

60. वही पृ.सं. 127

61. उषा अरोड़ा, लेख: महिला अस्तित्व की पहचान, आजकल, मार्च 2015, सं. फरहत परवीन, अंक-11, पृ.सं. 7